कैसे कहूँ ?

स्व० कुशवाहा 'कान्त'

जरा सुनिये तो !

क्या सुनाऊँ ?······खैर ! आप ठहर गये हैं तो सुन लीजिये। इस किताब में जो कुछ है, वह न तो कविता है, न लेख, न कहानी, न हेंग, न टेंग। वह तो सब्त है, बहक है, मौज है, वेसिर पैर की बातें। जब कभी थोड़ी-सी 'पी' लेता हूँ तो यही फितूर सवार हो जाता है। ससुरी कलम कागज पर दौड़ लगाने के लिये वेताब हो जाती है—फिर तो दनादन कागज के पन्ने सुफेद से काले, आफत के परकाले होने लगते हैं। वही बहक, वही मौज, इन पृष्ठों में है। पढ़ने का टाइम हो तो जरा पढ़िये !

महाकवि मोची

१०–१०–४२

परिचय

श्री कामताप्रसाद कुशवाहा (कान्त) मेरे अभिन्न हृदय हैं। आपकी गम्भीर रचनायें पढ़ने को मुझे पर्याप्त अवसर मिला है, परन्तु मैं यह नहीं जानता था कि आप हास्य की भी सुन्दर रचनायें कर लेते हैं। महाकवि 'मोची' के नाम से इस पुस्तक में आपही की रचनायें संगृहित हैं, रचनायें सुन्दर हैं। हमें प्रसन्नता होगी यदि आप उनकी गम्भीर रचनाओं की तरह हास्य की रचना का भी स्वागत करेंगे। प्रस्तुत पुस्तक की अधिकांश रचनायें पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं।

विनीत—

भगवान प्रसाद, बी० ए०

६–१२–४२

एल-एल-बी०, वकील,

मिर्जापुर।

ऊटपटाँग

तुम...च च...आप भी भला मुझे क्या समझेंगे ? बेवकूफ, उल्लू या और कुछ ? यह ऊटपटांग बातें आपको रुचेंगी नहीं, मगर मेरी खब्त ा भी कुछ ठिकाना नहीं। आज तो मैं महाकवि हूँ, शहर भर में मेरा है, लोग-बाग मुझे अच्छी नजर से देखते हैं—लेकिन कुछ दिन हले मैं न तो महाकवि ही था और न तो महाकवि का बच्चा ही। तब कन्नू मोची था और महुवरिया की सड़क पर जूता सीने बैठा करता । बड़ा मजा रहता था। गाली-गलौज करने में, बक्क-झक्क करने में . आनन्द आता था। मगर अब मुझे सम्हल-सम्हल कर बोलना है, कि कहीं बातचीत में कोई गाली न बक दूँ—कविता की किसी ंक्ति में कोई बेसहूरी न कर बैठूँ। तुम···च च···आप—क्षमा कीजिये, जतक मैंने कभी किसी के बाप को 'आप' नहीं कहा, इसीलिये बार-ार मुँह से 'तुम' निकल जाता है। हाँ ! तो आप ऊब रहे होंगे—लाचारी है। सुनते जाइये। जरा कष्ट ही सही।

एक दिन किसी कवि-सम्मेलन में मेरी और मेरे अन्तरंग मित्र महाकवि 'धोबी' की दो-दो- चोंचें हो गईं। बात यह थी कि हम दोनों मित्र होते हुए भी आपस में कुछ मैल रखते थे। महाकवि 'धोबी' ने मुझे नीचा दिखाने के लिये यह कविता बड़े ठाट से पढ़ी—

मैं गुड़ ही सही और आप धनियाँ ही सही।
मैं तेल ही सही और आप पनियाँ ही सही॥
देख लेना एक दिन पछाड़ देंगे तुमको—कि,
मैं मोची ही सही और आब बनियाँ ही सही॥

महाकवि 'धोबी' के व्यंगात्मक इशारे ने मेरी नसें फड़का दीं। मुझे बहुत क्रोध आया। मैंने भी जोर-जोर पढ़ा—

धोये महोबे घाट, हे हो।
धोबिया रे धोबिया, कहाँ तुम्हारो अउनन सउनन,
कहाँ तुम्हारो घाट :
मिर्जापुर में अउनन सउनन कासी तिहारो घाट॥
धोये महोबे घाट—हे हो॥

खूब तालियाँ पिटीं। सब ने वाह वाह की झड़ी लगा दी। मगर मुझसे खार खाने वाले सुकवि 'बंडा' से न रहा गया। वे बड़ी नजाकत से उठे और मंच पर आकर खड़े हो गये। एक बार उन्होंने अपनी खें-खें आवाज में खों-खों खाँसा, फिर अपनी कंजी आँखों द्वारा इधर-उधर ताक-झाँक की, तत्पश्चात् गर्दभ-गिरा में बोले—"बहनों और बहनोइयों, यानी भाइयों! आपने महाकवि 'मोची' की कविता का रसास्वादन किया। मगर जिस प्रकार सेंध लगने से चोरी छिपती नहीं, उसी प्रकार महाकवि 'मोची' की चोरी···यानी···हाँ-हाँ चोरी ही समझिये—छिप न सकी।"

"क्या कहा? चोरी?..." मैं उबल पड़ा, भाप की तरह—"अमाननीय सभापति महोदय तथा अनुपस्थित सज्जनों और और लोगों! आप

ध्यान दीजिये। सुकवि 'बंडा' अंडा-बंडा बकते हैं। यह मेरा अपमान है। क्या सुकवि 'बंडा' यह बताने की कृपा करेंगे कि किसके बाप ने इस कविता को अपनी पोथा-पोथी में लिखा है? बतायें! जल्द बतायें!..."

"पोथी-पोथा में नहीं, महाकाव्य में लिखा है...कवि कुल राजा कालिदास ने अपने 'धोबी माहात्म्य' नामक महाकाव्य में इसे लिखा है"—सुकवि 'बंडा' ने सक्रोध कहा।

"झूठ है!" श्रीयुत् 'लुच्चा' बोले—"यह पुकार नामक नाटिका के अन्तर्गत एक महाकाव्य है। कविभूषण श्रीसोहराब धोबी इसके रचयिता हैं..."

"हियर! हियर!..." सभापतिजी थपोड़ी पीटकर चिल्ला उठे।

"हियर! हियर!—" जनता आर्तनाद कर उठी।

"हाय हाय!—" मेरा हृदय हाहाकार कर उठा। आँखों के आगे रात हो आई। चोरी पकड़ ली गई। मुझ महाकवि का महाकाव्य धूल मिल गया। बात यह थी कि मैंने यह कविता एक इक्केवान को गाते सुना था! मुझे वह इतनी अच्छी लगी थी, कि चट अपनी 'टेंट बुक' यानी मेरी नोट बुक) में दर्ज कर लिया था। उँह-उँह! सारी शान मिट्टी में गिर पड़ी।

\+ + + +

लोग कहते हैं कि ईश्वर महान् है, य' है, व' है' मगर कभी-कभी वह भी भोंड़ी गलती कर बैठता है। कम से कम मेरे बारे में उससे जरूर हुई। उसने मुझे बहुत दिन बाद महाकवि बनाया, वर्ना पहले तो एकदम व' था, क्या नाम से कि बेदुम का गदहा—यानी बेपेंदी का। उस वक्त मुझ में अक्ल भी नहीं थी—जितनी आज है। दिमाग गोबर और न जाने क्या इस टिस भरा था। यह नहीं कि मैं पढ़ा नहीं था—वल्लाह! मैं अपने गाँव में सबसे ज्यादा पढ़ा लिखा। झिरमिट नाऊ से लेकर पिल्ले धोबी तक सब अपनी चिट्ठी वगैरह

मुझी से पढ़वाते थे। मैं भी बड़े ताव से···च...चाव से उनको अपनी पढ़ाई का नमूना दिखाता था। मगर अफसोस यही था कि मैं मोची था सो भी बहुत टर्रे मिजाज का।

लेकिन अरे बाप रे! औरत का नाम न लीजिये। चचा जान! मैं दुनिया में सबसे ज्यादा डरता हूँ, तो औरत जात से, सो भी अगर ताव चढ़ी हो, तो बाप रे बाप! अपनी श्रीमतीजी भी खमरिया के किसी आबनूस के कुन्दे से चीड़-फाड़कर निकाली गई थीं। कद पाँच फीट लम्बा और चौड़ाई भी करीब-करीब उतनी ही। मैं तो जब से व' आई हैं. बराबर ईश्वर को गालियाँ दिया करता हूँ—"हत्तेरे ईश्वर फीश्वर की! यही अक्ल भरी है तेरे मगज में? जिस पर दुनिया मरती है, तेरी खुशामद करती है? मैं होता तो तुझे सिंहासन से नीचे ढकेल देता और तू ब्लैक सी में गिर कर और भी काला हो जाता"—बस अपनी श्रीमती-जी बिल्कुल काली माई' हैं। व' भी जब हाथ में झाड़ू लेकर खड़ी हो जाती हैं, तो सच जानिये मेरी धोती नीचे खिसकने लगती है—एकदम चु...चु...चुड़ैल...कहीं सुन तो नहीं रही हैं यार।

क्या कहूँ अपने बाप को, जिसने ऐसी भैंस मेरे गले में लटका दी। सच यार! दिनरात जान साँसत में पड़ी रहती है। मेरी सारी कविता ही फुर्र से उड़ जाती है, देवीजी के दर्शन कर।

\+ \+ \+ \+

हाँ! तो मैं महाकवि बनने के पहले एकदम गावदी था·—मुझे विश्वास ही न था कि मैं एक दिन महाकवि बन जाऊँगा। अरे! बाबा ने बहुत काँखा तो एक झोपड़ी बनवाली तुलसी के चौराहे पर और दद्दू ने बहुत चौकड़ी भरी तो गढ़ैया बन गये और मैं उछला कूदा तो मोची बन बैठा और लोगों के दिल में···च च...जूतों में टाँके लगाने लगा।

एक बार मैंनें अपने दद्दू से कहा—"दद्दू! मुझे कोई अच्छा-सा रोजगार करा दीजिये। ई ससुरे जूते हमसे नहीं सिले जाते—"

"रोजगार करोगे ?"—दद्दू ने अपनी आँखें कपार पर कर लीं—"शऊर है रोजगार करने का ? जिसे उठने बैठने का तरीका नहीं—वह रोजगार करेगा ! हूँ..." दद्दू ने इतने जोरों से हुँकार भरी कि मैं धड़ाम से गिर पड़ा।

दद्दू की बात न्यारी है। पूरे हिटलर हैं, हिटलर !

\+ + + +

महाकवि होने के बहुत पहले की बात है। उस समय मैं पढ़ा लिखा बहुत कम था। अच्छर-अच्छर करके चीठियाँ पढ़ा करता था। एक दिन रामहरखा दौड़ा हुआ आया और बोला—"हरे कन्नू ! देख तो ! जरा ई चिठिया पढ़ !" इतना कहकर मेरे हाथ पर उसने एक पोस्टकार्ड रख दिया। लिखावट बड़ी साफ थी। धीरे-धीरे अच्छर-अच्छर मैं पढ़ने लगा—सि···सिरी···,सिरी···"

"सिरी नहीं, मिसिरी होई। मिसिरी ललवा की चिट्ठी है—" रामहरखा ने कहा।

मैं पढ़ता गया—"सिरी···शश···शो···शोरवा···"

"शोरवा ?···किसी मुसुरमान की चिट्ठी है क्या ?"

"सिरी शरब गुड़···गुन···सप···"

"सपना होई !"—रामहरखा चिल्लाकर बोला। मगर वह चिट्ठी मुझसे पढ़ी नहीं गई।

तब से अब में महान् अन्तर है। अब मैं काफी पढ़ लिख गया हूँ। पहले मुझमें इतनी अक्ल नहीं थी। एक दिन दद्दू ने मेरे हाथ पर एक पैसा देकर कहा कि कन्नू ! एक पैसे का घी तो ले आ !—मैंने इसके पहले घी देखा न था। देखता कैसे, नसीब में तो नून लिट्टी बदी थी। मैंने सोचा चलो पंसारी के यहाँ चलकर घी तो देख लेंगे। मैं पंसारी की दूकान पर गया और उससे बोला—"एक पैसे का घी दे दो—" पंसारी ने एक पत्ते पर थोड़ा सा घी दे दिया। मैंने सोचा यह घी का

नमूना दिखा रहा है। मैंने पत्ते पर का घी चट् से जीभ पर रख लिया और तब कहा—"हाँ! घी अच्छा है, तौल दो।"

पंसारी बिगड़ा—"घी तो दे दिया, अब क्या लोगे?"

मैं भी बिगड़ पड़ा—"हे पंसारी के बच्चे! बेइमानी न कर। सीधे से घी तौल दे···"

झगड़ा सुनकर लोग इकट्ठे हुए। मैंने चिल्ला चिल्लाकर सबको पंसारी की दगाबाजी बताई, मगर सब मेरे ऊपर हँसने लगे। एक बूढ़े ने तो यहां तक दिया कि इसको दिमाग नहीं है।

एक दिन दद्दू ने मुझे एक चिट्ठी दी और कहा कि इसे लेटर बक्स के हवाले कर आओ। मैं चिट्ठी लेकर चला, मगर बड़ी उधेड़ बुन में पड़ा था। मुझे मालूम ही नहीं था कि यह लेटरबक्स क्या बला है। बहुत सोचा और अन्त में मतलब निकाल ही लिया। सोचा, जैसे खुदा-बक्श, इमामबक्स आदि नाम होते हैं, उसी तरह लेटर बक्स भी कोई होगा। यह सोच मैं बीच बाजार में खड़ा होकर लेटर बक्स, लेटर बक्स पुकारने लगा। एक बाबू बन ठन के जा रहे थे, मुझे पुकारते सुनकर ठिठक गये। मैं समझ गया कि यही लेटर बक्स हैं। मैं उनके पास जा पहुँचा और कहने लगा—"बड़ी देर लगा दी लेटर बक्स बाबू! यह चिट्ठी दद्दू ने आपको दी है—" बाबू हँस दिये—ठीक वैसे ही जैसे किसी बेवकूफ को देखकर कोई विद्वान् हँसता है, फिर मेरे हाथ से चिट्ठी लेकर सामने टँगे हुए लाल रंग के एक बक्स में छोड़ दी।

\+ + + +

मेरे महाकवि होने की भी कथा विचित्र ही है। कहते हैं कि कला और बुद्धि का सम्मिश्रण होने से ही लोग महाकवि हो सकते हैं। मुझमें बुद्धि और कला दोनों ही विद्यमान थे, केवल उनका विकास नहीं हुआ था। नाचने की कला मुझे बहुत अच्छी आती थी और दर्जनों दफे मोची जमात की भँड़ई में होली के मौके पर मैं लौंडा बनकर नाच भी

चुका था—यह अनोखी कला थी। इसके अतिरिक्त बुद्धि थी ही। फिर क्या था—मैं महाकवि बन बैठा।

मुझ में महाकवित्व का विकास कैसे हुआ, सो भी सुन लीजिये। उस दिन मैं अपनी जूते की दूकान पर बैठा हुआ अपना काम कर रहा था कि मेरा बालसखा झगड़ा आ पहुँचा—"अरे कन्नू! इधर तूने कोई भँड़ई का गाना बनाया या नहीं?—" आते ही उसने कहना शुरू कर दिया—"इस साल तो भँड़ई के दो अखाड़े हो गये हैं। अपना अखाड़ा बढ़ना चाहिये—हाँ न!"

"हाँ यार! बढ़ना तो चाहिये और बढ़ भी जायगा। एक गाना बनाया है—सुनोगे?..."

"सूनूँगा यार! जरा लय से सुनाना!..."

मैंने लय से गाने के लिये सुर भरा—गाने लगा—

जिन करा राम, पराये घर असवा।
भइलें लड़िकवा बुढ़इया के खातिर, आइल पतोहिया
टूटि गये नतवा।
जिनि करा राम—

सड़क पर से एक हलब्बी मोटर जा रही थी, झक्क से रुक गई और उस पर से एक कमानीदार कमरवाले सज्जन उतर कर मेरी दूकान की ओर बढ़े मैं सजग होकर बैठ गया।

"तुम तो बड़े अच्छे कवि हो मोची!"—उन सज्जन ने मुझ से कह दिया।

"जी हजूर! जूते बनवाने हैं क्या?"—वास्तव में मैं कवि का मतलब ही न समझ सका।

"यह कविता तुमने बनाई है क्या?—"

"कौन-सी हजूर?"

"यही! जो अभी गा रहे थे"—

"अजी ! वह तो गाना है साहब !"—मैं हँस पड़ा।

"अरे वह कविता है—कविता ! तुम लोग उसे गाना कहते हो और हम लोग कविता। देखो मैं भी कवि हूँ। कवियों का गुरु हूँ। लोग मुझे कवि गुरु 'गोबर' कहते है..." वे सज्जन जरा सा झुके—"अरे वाह ! तुम में तो महाकवि के लक्षण हैं—"

"महाकवि ?"—मैं भी आश्चर्य से बोल उठा।

"हां मोची हां ! तुम महाकवि हो। तुम जूता सीने के लिये नहीं बने हो। जरा तुम्हें एक गाइड की जरूरत है–तुम मेरे शिष्य हो जावो। बस !—" वे सज्जन प्रसंशात्मक दृष्टि से मेरी ओर देखने लगे—"वाह ! क्या कविता की है ?—'आइल पतोहिया टूटि गये नतवा'—कितनी मर्मस्पर्शी कठोर सत्य बात है ? कालिदास ने भी ऐसी चौकड़ी नहीं भरी और न तो महाकवि मेघदूत और रघुवंश ने ही।..."—

तो मैं उसी दिन से कवि-गुरु 'गोबर' का शिष्य हो गया और उन्हीं के साथ रह कर अध्ययन करने लगा। धीरे-धीरे मुझमें विकास होने लगा। खूब पढ़-लिख गया। विलायती देशी सब ! अखबार सखबार कुल। दस बीस कवितायें पत्र-पत्रिकाओं में छपते ही धूम मच गई धूम ! कुछ दिनों बाद मैं पूर्ण महाकवि होकर अपने परिष्कृत रूप में जनता के सामने आया। जनता ने स्वागत किया—"महाकवि मोची की जै"—मैं कुप्पा हो गया।

महाकवि हो जाने पर मेरी वेष-भूषा कुछ अजीब सी हो गई। यूँ तो मेरा चेहरा पहले ही से जनाना-सा था—अब मूँछें सफाचट हो जाने से कुछ कसर ही न रही—उस पर तुर्रा यह कि सर पर कवियों जैसे बड़े-बड़े नितम्ब-चुम्बी बाल, गगन-चुम्बी नासिका, ओठों पर पानों की लाली—अजब था गजब था।

उस दिन पहले ही पहले सफेद दक्क कपड़े पहने हुए, अपनी महाकवि की देदीप्यमान सूरत लेकर जब मैं घर में घुसा तो सामने ही

श्रीमतीजी को देखकर न जाने क्यों मैं डर गया। खद्दर की मोटी धोती नीचे खिसकने लगी, मैंने उसे हाथ से सम्भाला। लेकिन यह देखकर कि उनके हाथों में झाड़ू नहीं है—मेरी हिम्मत ने थोड़ी कमर कसी और मैंनें कलेजा कड़ाकर पुकारा—"अरी सुनती हो···?"

"क्या है ? है क्या ?"—सुरसा-सी खांव-खांव करके दौड़ पड़ी वह।

मगर मैं डरा नहीं—मैं महाकवि हो गया हूँ भाई ! सारी दुनिया मेरे पैर चूमती है—लो तुम भी जरा···"

"क्या कहा ?···" कूदकर दूर खड़ी हो गई वह और अगर मैंने लपककर मुलायमित से उनका हाथ न पकड़ लिया होता, तो वे जरूर झाड़ू लेने दौड़ जातीं।

"कविता सुनोगी ?"—मैंने पूछा। यद्यपि मैं जानता था कि भैंस के आगे बेन बजावे, भैंस खड़ी पगुराय—फिर भी मैंने आव देखा न ताव, चट से अपनी कविता सुनाने लगा—

तुम पुलिस लाइन की बिगुल प्रिये, मैं शिफ्टन मिल का भोंपा।
तुम सहबानी हैट बनी, मैं हूँ दखिनहँवां टोपा॥
तुम A.R.P. की हैण्ड बेल, मैं कर्कश स्वर का घण्टा।
तुम सोआ पालकी नरम नरम, मैं आलू भांटा बण्डा॥
तुम गुड़ की भेली बड़ी मधुर, मैं चिउँटा काला काला।
तुम पूरी खस्ता बनी प्रिये, मैं हल्दी गरम मसाला॥
तुम जेण्टिल मैन की हाथ छड़ी, मैं गुण्डाशाही डण्डा।
तुम मुर्ग मुसल्लम हो लजीज, मैं बिस्तुइये का अण्डा॥
तुम लीला चिटनिस बनी और मैं हूँ अशोक गंगोली।
तुम चून सुपारी कत्था हो, मैं सड़े पान की ढोली॥
तुम 'डेफ' और मैं 'डम्ब'—
तुम 'एयर प्लेन' मैं 'बाम्ब'—

"तभी तो कहते हैं कि दुनियां गारत हो रही है"—एकाएक दद्दू

गरजते हुए कोठरी में घुस आये। उन्हें देखकर मेरा सारा महाकवित्व काफूर हो गया और मैं जमीन का मुँह देखता हुआ खड़ा रहा।

"बोलता क्यों नहीं? यह मेहरपन की बातें कहां से सीख आया?"—दद्दू गरजे। बहुत अण्ड-बण्ड बक गये। अन्त में मुझे भी ताव आ गया। आखिर इस बेवकूफी का भी कुछ ठिकाना है?—"ये मेहरपन की बातें हैं?"—मैं भी गरजा—"जिसे दुनिया अच्छा कहे, उसे आप बुरा कहें...."

"दुनिया अन्धी है!"—

"अन्धी है? और आप?....आप बड़े आंखवाले हैं—क्यों? इन्हीं आंखों पर गर्व है?....यह आंखें नहीं, कानी कौड़ियां हैं, जो कि न चित्त न पट्ट!....आज मेरे बाप होकर...."

"अबे!..." चिल्ला पड़े दद्दू—"मैं तेरा बाप नहीं, बल्कि तेरे बाप का भी बाप नहीं! चुप रह!"

"क्यों चुप रहूँ? एक तो झभक-पटककर मेरा सारा महाकवित्व फुर्र से उड़ा दिया..."

बात ज्यादा बढ़ जाती, अगर मेरे परम मित्र श्रीयुत 'अफीमची' न आ पहुँचते।

\+ + + +

श्रीयुत 'अफीमची' की आड़ में कौन सा चेहरा छिपा है, जानते हैं आप? श्री भगवानप्रसाद श्रीवास्तव बी० ए० एल० एल० बी० ही दूसरे शब्दों में 'अफीमची' हैं। शहर के अच्छे वकील हैं। चुपके चेहरे पर हिटलरशाही मूँछे और जिन्ना-जैसी नाक—अजब हैं, गजब हैं। आपको मुझसे कुछ खास दिलचस्पी रहती है। हमारा तो कुछ ऐसा अन्दाज है—औरतों का अन्दाज नहीं कि हम दोनों ढोलक और सारंगी की तरह मोटे और पतले होते हुए भी ऐसा मिलकर राग निकालते हैं कि आह आह! वाह वाह!

वकील साहब विनम्र बहुत हैं। बात-बात में कहते हैं—"भाई! मैं किस लायक हूँ..."

मैं भी समझता हूँ कि जब Kiss लायक हैं, तो ठीक ही है। वक्त वेवक्त काम ही जायगा।

आप भी बड़े तपाक से कहा करते हैं—"भाई जान! इस असार संसार में एक आपही तो मेरे सार हैं।

सब कुछ है, मगर एक लत इनमें बड़ी बुरी है। वही अफीम खाने की। अफीम के नशे में आप कुछ बहुत ही मजेदार वाकयात् कर बैठते हैं। एक दिन अफीम की पिनक में आप अपने एक मुवक्किल से बातें कर रहे थे। वह कह रहा था—"उकील साहेब! ऊ सरवा एतने जोर से डंडा मारेस कि बब्बा क हाथइ टूटि गा—राम रे राम!..."

"हाथ टूट गया?"—वकील साहब बोले—"कहीं कमर नहीं टूटी—राम रे राम!"

एक बार आप एक ऊँची चारपाई पर सो गये। अफीम की पिनक में उठे तो पैर लड़खड़ाये और जोरों की आवाज के साथ जमीन पर आ रहे। अपने ही गिरने का धड़ाका सुनकर आपने जमीन पर पड़े पड़े ही अपने नौकर को आवाज दी—"भरतुआ!"—

"का है बाबू?—हम रोटी पकावत हैं...." नौकर ने कहा।

"अरे देख तो! कैसा धड़ाका हुआ?"

"कोई बिलार कूदी होई!"—नौकर ने कह दिया।

"तू उठता नहीं सूअर कहीं का—जरा लालटेन लेते आना"—

जब लालटेन लेकर नौकर आया, तो उसने देखा कि आप जमीन सूँघ रहे हैं। बलिहारी!

एक बार रात के वक्त पिनक में आप एक रिक्सावाले से बोले—"हे रिक्सावाला! ले चलेगा!...."

"चलूँगा बाबू! आइये!"—रिक्शावाला आपको रिक्शे में बैठने का संकेत करने लगा।

आप बिगड़ उठे, बोले—हे ! तुम चढ़ेगा, हम खींचेगा"—

रिक्शावाला आश्चर्य में पड़ गया ! आप और बिगड़ गये, बोले—"चढ़ता क्यों नहीं सूअर !....."

रिक्शावाला चढ़ गया। वकील साहब उसे रिक्शा समेत अपने घर तक खींच लाये और उसके आगे चार रुपये फेंक दिये, जिसे उन्होंने नशे की झोंक में चार पैसे समझा था।

\+ \+ \+ \+

दोस्तों की बात उठी है, तो और सुन लीजिये। जयदेव वर्मा 'श्री इन्दु' मेरे प्रमुख मित्र हैं। चेहरे पर ब्यूटी 'प्लस' नमक 'प्लस' मिठास 'माइनस' मूँछों, का फारमूला साल्व होता है। जरा अजीब अन्दाज के साथ मुस्कुराकर बातें करते हैं। 'अण्डर टीन' लोगों से आपका कुछ खास सम्पर्क रहता है।

'भरत' अग्रवाल भी मेरे दोस्त (?) हैं—परन्तु 'श्री इन्दु' जी के तो अभिन्न हृदय ही हैं। हम लोग इस जोड़ी को 'भरतेन्दु' (भरत + इन्दु) पुकारते हैं। हाल में जब 'भरत' ने बहुत कांख-कूँखकर एक हस्तलिखित पत्रिका निकाली थी, तो 'श्री इन्दु' जी ने उसे हड़पकर इस बात की सत्यता प्रकट कर दिया था और उस वक्त श्री देवीकृष्णजी को भी यह कहने का मौका मिल गया था कि देख लिया कवियों और लेखकों को।

देवी कृष्णजी भी मेरे दोस्त हैं—अजीब से 'लहरियादार' आदमी हैं। बात करते करते अपना मुँह बायीं हथेली से इस तरह छिपा लेते हैं कि वाह वाह—हाय हाय ! वैसे मैं सिगरेट बहुत पीता था, जब देखो तब भकर भकर मुँह से धूँआ !मगर श्रीदेवीकृष्णजी ने मुझे सावधान कर दिया कि सिगरेट इन्सान को शैतान और शैतान को इन्सान बना देती है। मैं भी सम्भल गया। क्यों न हो, आखिर देवी भी ठहरे और कृष्ण भी—राधा भी, गोपाल भी—रुक्मिणी भी, नटवर भी—वाह !

'यादवेश' जी का क्या पूछना। वे तो बाबूनन्दन हैं। 'लक्ष्मी' देवी की उन पर कृपा है। 'जद्दन कमेटी' के सर्वेसर्वा हैं।

श्रीमती बी० के० अग्रवाल से भी मेरी अच्छी दोस्तानी है। मेरे ऊपर आपकी खास मेहरबानी रहती है। आप स्थानीय 'जोहरा संघ लायब्रेरी' की महामन्त्रिणी है। श्री बड़कूराम सिंह वकील स्थानीय 'अधर्म महामंडल' के महाब्रह्म हैं, (महाब्राह्मण नहीं) मिलनसार आदमी हैं। आपके यहां शरीफा भी होता है—(शराफत नहीं)—वह खुम्चावाला भी मेरा दोस्त है, जो सुबह होते ही सर पर बड़ा-सा खुम्चा रखे पुकारता है—'हे माटी की धोंन्ही धोंन्हा, राम राम कहो!...'

+ + +

मैंने सुना था कि पर्यटन से बुद्धि बढ़ती है। अतः अपने ज्ञान को पूरा करने के लिये पर्यटन करना मैंने उचित समझा। चटपट अकेले ही स्टेशन रवाना हो गया। इन्टर क्लास का टिकट लेकर एक डब्बे में चढ़ा।

अब तो मैं महाकवि था। सर पर बड़े-बड़े बाल थे—मूँछें सफाचट थीं, हाथों में माशूकी अँगूठियां, बदन पर एक ग्रेण्ड कुरता और उसके ऊपर से एक रेशमी चादर।

डब्बे में मैं अकेला ही था, अतः चादर तान बर्थ पर सो रहा। नींद आ गई और सपना भी देखने लगा—बड़ा ही मजेदार!

+ + +

मैं एक जहाज पर था। बड़ा-सा जहाज, समुद्री थपेड़ों के साथ 'अप ऐन्ड डाउन' होता हुआ। बड़ा मजा आ रहा था। खूब हर्षोल्लास था। मगर इतने में ही किसी ने चिल्लाकर कहा—'तूफान!'—और सारी खुशीं हवा हो गई। हवा का जोर बढ़ा और तीव्र तूफान सर पर आ धमका। समुद्री लहरें आसमान चूमने लगीं। जहाज गेंद की तरह उछलने लगा। शोर मच गया।

दूसरे कमरे से शोरगुल की आवाज आई। मैं उधर ही बढ़ा।

अरे ! इस कमरे में तो सिनेमा की सभी अभिनेत्रियां मौजूद हैं—ये यहां क्या करने आई ? मैं चुपचाप देखता रहा ।

शान्ता आप्टे, 'अमर ज्योति' वाली पोशाक पहने और हाथ में एक पतली-सी तलवार लिये खड़ी थीं और कह रही थीं—"यह तूफान क्या कर सकेगा ? तुम लोग घबड़ाओ नहीं। मेरे रहते हुए कोई डर नहीं....." उसने अपने हाथ की तलवार हवा में घुमाई फिर 'अमर ज्योति' वाला गाने लगीं—'लहरों में लहरों-सी शमशीर चमके'—गाकर बोली—"ओह प्यारी रमोला ! तुम पीली पड़ी जा रही हो ओह ! देखो, क्या ही दिलकश नजारे हैं ? गाओ, गाओ प्यारी—'सावन के नजारे हैं'—गाओ ! क्या बताऊँ ! यहां कोई सायकिल नहीं है, वर्ना तुम उसी पर चढ़कर अपना दिल बहलातीं। मर्दों से सायकिल लड़ाने में तुम्हें खास आनन्द आता है—कम से कम "खजांची" में तो तुमने यही कमाल कर दिखाया था ।"

पीछे से गाने की आवाज आई—

जिसके घर में माँ नहीं, बाबा करे ना प्यार ।
ऐसे दीन अनाथों को, राम नाम आधार ॥

देखा तो वासन्ती अपने छोटे हाथों को बजाती हुई गा रही थीं। शान्ता आप्टे को क्रोध आ गया। वह चिल्ला उठी—"चुप बेवकूफ कहीं की ! संत तुलसीदास ने इसका माथा फिरा दिया है—"

"हाँ हां !..." वासन्ती नाचती हुई बोली—"माथा फिरा दिया है। मैं कहूँगी···कहूँगी···राम ! राम ! राम !..."

"यह बेवकूफ रंजीत स्टूडिओ का सपना देख रही है"—शान्ता आप्टे हँस पड़ी—"आओ ! आओ प्यारी लीला चिटनिश ! गाओ ! 'जल भरने चली री गुइयां'—क्या तुम अपने 'कंगन' वाले घड़े में इस समुद्र का खारा पानी भर सकती हो !...न ! रहने दो !...व' सितार रखी है। लो—गाओ ! 'सूनी पडी रे सितारा !..."

"नहीं बहन ! मेरी तबीयत नहीं ठीक है"—लीला चिटनिश ने कहा।

"तबीयत नहीं ठीक है ? अच्छा ! आओ ! जरा इस झूले पर झूलो और गाओ 'झूले के संग झूलो झूलो मेरे मन !'—कहो तो बगलवाले कमरे में से अशोक कुमार को भी बुला दूं। शाहनवाज तुम्हारे मार्ग में रोड़े न अटकायेगा।... सच !..."

"हे !..." उपर से आवाज आई। सबकी दृष्टि ऊपर चली गई। देखा, मिस नाडिया, 'हण्टरवाली' की पोशाक में जहाज के मस्तूल पर चढ़ी हैं और भयानक तूफान का मजा ले रही हैं। सबको ऊपर देखते पाकर मिस नाडिया ने पुनः अपना हण्टर फटकार करकहा—'हे ! हे ! हे !'

"उतर बेवकूफ कहीं की !"—शान्ता आप्टे बिगड़ी—"मस्तूल को भी 'पञ्जाब के बेटे' की पीठ या वाडिया स्टूडिओ का मैदान समझ रखा है। देखो, देखो ! कितने ऊँचे चढ़ गई है। गिरेगी तो एक दाँत भी नहीं बचेंगे···"

"शान्ता बहन !"—मिस नसीम बोलीं—"तुम जब गुस्से में बोलने लगती हो तो बड़ी प्यारी लगती हो—सच !—'दुनिया न माने' में तुम्हारा गुस्सा खूब था। जिसे दुनियां सीधे नहीं मानी, उसे गुस्से से मना दिया तुमने। खूब बाबूराव पटेल को अब भी तुम्हारा वह गुस्सा याद होगा।"

इतने में सामने का दरवाजा खुला और सिनेना के कतिपय पुरुष कलाकार आ पहुँचे। जागीरदार और मजहर खाँ को देखकर शान्ता आप्टे ने घूँघट काढ़ लिया—"ओह ! मजहर दादा अपने 'पड़ोसी' के साथ हैं—बेशर्मो शर्म करो !—" कहा उसने। सभों ने चेहरे पर थोड़ा सा घूँघट काढ़ लिया।

"ओह ! चन्द्रमोहन आप भी हैं, जहाँगीर के रूप में ? वाह !··· आपकी नूरजहाँ 'व' हैं"—शान्ता आप्टे ने मिस नसीम की ओर संकेत कर दिया—"और आप भी हैं मिस्टर पृथ्वीराज, सिकन्दर-आजम !··· वाह ! वाह !····मगर अब तो यह सिकन्दरी पोशाक उतारकर 'आज का ' स्तान' वाली कोई मामूली सी पोशाक पहन लीजिये !···वाह वा !

मिस्टर चार्ली ! आप भी···गाइये, गाइये ! 'मुसाफिर' बनकर गाइये—हाय हाय री मेरी माँ—ओह ! आप शर्मा रहे हैं, मगर आपने तो ख 'ढिंढोरा' पीटा था····" शान्ता आप्टे ने दूसरी ओर देखा—"वाह ! मुमताज अली आप भी हैं ? वाह !·······उधर जाएँये, उधर ? मि शाहजादी व' हैं। जरा दोनों मिलकर गाइये तो—मैं दिल्ली से दुल्ह लाया रे' हे बाबूजी !"—

हवा का जोर बढ़ गया। तूफान बहुत तेज था, मगर इन अभिनेता तथा अभिनेत्रियों को कोई परवाह न थी। शान्ता आप्टे की बातें सुन सभी खिलखिला कर हँस पड़े।

+ + + +

मैंने जम्हाई ली और उठ बैठा, मगर हैं ! मेरी तो अक्की बक्की भूल गई। मैं ट्रेन में लेटा था और ट्रेन पूरी रफ्तार से भागी जा रही थी। फर्क सिर्फ यही था कि जिस वक्त मैं सोया था, उस वक्त डब्बे में अकेला था, मगर जगने पर सामने तीन देवियों को भी बैठा देख रहा हूँ। शायद इन्हीं के हँसने की आवाज पर मेरी नींद खुली थी। मैं बर्थ पर बैठ गया। केवल बड़े बड़े सर के बाल और चेहरा खुला था और सारा बदन, यहाँ तक कि पाँव भी मैंने रेशमी चादर से ढक रखा था।

"क्षमा करें देवीजी ! हम लोगों के हँसने से आपकी नींद उचट गई—" उनमें से एक ने मेरी ओर देखते हुए कहा। मैं हैरान था कि यह मुझे देवीजी क्यों कह रहीं हैं। मैंने सोचा, शायद दूसरे से कह रही हों, इसलिये चुप रहा।

"मैं आप से ही कह रही हूँ बहन ! आप कहाँ तक जायँगी"—उसने फिर मुझसे कहा। उसकी दोनों साथिनें भी मेरी ओर देखने लगीं।

मैं तैश में आ गया—"आप मुझे बहन, देवीजी, यह, वह क्यों कह रही हैं ? क्या आपने मुझे औरत समझ रखा है..."

"तो क्या आप...."

'हाँ हाँ ! मैं मर्द हूँ, महाकवि हूँ—''मैं उठकर खड़ा हो गया। वे तीनों खिलखिला कर हँस पड़ीं।

"ओह क्षमा कीजियेगा। आपके चेहरे की बनावट और सर के लम्बे बाल देखकर हम सब धोखा खा गईं। सो भी आप जनाने डब्बे में सफर कर रहें हैं···"उनमें से एक ने कहा।

वास्तव में वह जनाना डब्बा था। जल्दी में मैं इसे देख न सका था। मैं बैठ गया। वे तीनों मेरी ओर आश्चर्य भरी दृष्टि से देखने लगीं।

"तो आप महाकवि हैं ?"—एक ने पूछा।

"जी हाँ महाकवि 'मोची' हूँ"—मैंने नम्रता से उत्तर दिया।

"ओह आपही हैं ? आपकी कविता मैंने किसी पत्रिका में देखी थी"—

"देखी होंगी"—मैंने कह दिया, फिर सोचा जरूर ये तीनों सम्भ्रान्त कुल की महिलायें हैं और वेश-भूषा से किसी महिला सम्मेलन की सभानेत्री आदि मालूम पड़ती हैं, इन्हें अपनी रचित कोई पुस्तक समर्पित करनी चाहिये। यह सोचकर मैंने अपने सूटकेस में से एक पुस्तक निकालकर उन तीनों की बढ़ा दी—"लीजिये! यह मेरी हाथ से लिखी हुई पुस्तक है···"

"धन्यवाद !"—तीनों ने एक साथ ही 'अटेन्शन' होकर कहा।

मैं जरा उठँग कर बैठ गया, फिर पूछा—"तो आप लोगों का मकान···"

"जी हाँ ! लखनऊ में है···"

"आप लोग क्या काम करती हैं ?"

"हम लोग ?···" कुछ हिचकिचाहट के साथ एक बोली—"हम लोग रूप बेचती हैं···"

यह रूप बेचना क्या बला है, यह मेरी समझ में नहीं आया। मैंने सोचा कोई दुकानदारी होगी, यही सोचकर पूछ बैठा—"बड़ा अच्छा है ?···कहिये बिक्री-बट्टा मजे में है ?"—

वे तीनों हँसने लगीं—"अजी जनाब आप समझे नहीं। हम लोग तवायफ हैं···" एक ने कहा।

"हाय हाय! उँह उँह! लाइये मेरी किताब इधर दीजिये। सारा मजा किरकिरा कर दिया आप लोगों ने यह रूप-सूफ बेंचकर। लाइये मेरी किताब···"

"जरा सुनिये तो···"

"नहीं नहीं! पहले मेरी किताब दीजिये, तब इधर उधर कीजिये। आप लोग बड़ी खतरनाक हैं"—मैंने कहा। उनसे किताब लेकर मैं फिर सो गया। जब दुबारा नींद खुली तो देखा कि वे तीनों देवियाँ गायब थीं और ट्रेन लखनऊ स्टेशन पर खड़ी हुई हाँफ रही थी। मैं खिड़की से सर निकालकर लखनऊ स्टेशन का दृश्य देखने लगा, इतने में ही एक मोटा सा दिहाती मेरे डब्बे में घुस आया और बड़े ठाट से गद्दीदार बर्थ पर बैठ गया और बीड़ी पीने लगा, गाड़ी आगे बढ़ी।

"हे! यहाँ बीड़ी मत पीओ!"—मैंने अपना रंग जमाने के लिए कहा, मगर वह देहाती चुप रहा।

"तुम्हारा टिकट कहाँ है? जानते हो, यह इण्टर क्लास है?"

अबकी बार वह देहाती आँखें तरेरकर बोला—"सिटिर पिटिर मत करा। सोझे बैठा रहा। हम ऐसन लखनउवन से नहीं डरित हम मिरजापुरी गुण्डा हई!"

मुझे गुस्सा चढ़ आया—"क्यों बे! जबान सम्भाल के नहीं बोलता?"—

"न बोलब, का करब्य?"—

"उल्लू का पट्ठा!···"

"ससुर के नाती!···" उसने बिना नोटिस दिये हुए गालियाँ देनी शुरू कर दीं। मैं उठकर खड़ा हो गया और भर जोर चिल्लाकर बोला—"गेट आउट...गेट आउट···गेट आउट!···"

अरे बाप रे! वह तो आग हो गया। लपककर उसने मेरा झोंटा पकड़ लिया—"सरऊ! गारी देब्य!···बेटा उठ! बेटा उठ! बेटा उठ!—काटि के राखि देव इहीं"—वह चिल्लाया—"मेहरन की नाईं झोंटी राखे बाटेन"—

मैं चुप हो के बैठ रहा। ऐसे भयानक गामा से कौन लड़ता! दिल्ली आकर मैं ट्रेन से उतर पड़ा। एक होटल में ठहरा। मैंने बेयरा को बुलाकर कहा—"क्योंजी! यहाँ पर लेडीफोन है?"

"लेडीफोन क्या हुजूर!—"

"अरे भाई! मैं महाकवि हूँ। जहाँ ठहरता हूँ, सौ पचास लोग बात करने के लिये लालायित रहते हैं। लेडीफोन का होना बहुत जरूरी है"—मैंने कहा।

"क्या हुजूर का मतलब टेलीफोन से है?

"अजी हाँ, वही! तुम लोगों को कभी महाकवि से पाला नहीं पड़ा क्या?"

\+ \+ \+ \+

दूसरे दिन 'अखिल आर्यावर्तीय मूर्ख महासम्मेलन' था। उसमें मुझे भी आमन्त्रित किया गया। मेरा बड़ा स्वागत हुआ। अन्त में जब कि सभापति महोदय ने बहुत आग्रह के साथ मुझसे कुछ कहने की प्रार्थना की, तो मैं उठा—"Ladies-men and Gentle-women!..." ने शुरू किया—"आज आप लोगों को अपनी बनाई एक अच्छी कविता सुनाता हूँ। वह कविता 'अछूत कन्याओं' के प्रेमी अशोक कुमार को बहुत पसन्द है—

किसे कहता है मूरख सार, सार, सार—तेरा कौन है?
तेरा कौन है रे! तेरा कौन है!
दुनिया में कोइ सार नहीं है, यह असार संसार।
एक्का ताँगा छोड़ छोड़, सब रक्खो घर में कार॥
कार, कार, कार—तेरा कौन है?

"वाह! वाह! वाह!"—जनता आर्तनाद कर उठी।

"एक और! एक और!"—भीड़ में से आवाज आई।

लाचारी थी, सुनाना ही पड़ा—

पिनकत बीते दिन रैन ।
निस दिन बिरहा मोहिं सुनावै, कजरी कोइ सुनै न ।
रात कटत गिन गिन कर पैसा, ढूँढ़त नैना ऐसा वैसा ॥
आओ सुनाओ मन के बासी, गर्दभ स्वर के बैन ॥
पिनकत बीते दिन रैन ॥

"कोई सूरदास के टक्कर की सुनाइये"—किसी ने कहा ।

एवमस्तु !"—

चोरी करि काहू सुख न लह्यो ।
कोतवाल कै डंडा खायो, मुँह से कुछ न कह्यो ॥
चार साल की सजा भई, यह अनुपम लाभ लह्यो ।
जेल में चक्की पीसत पीसत, नैनन नीर बह्यो ॥

दिल्ली भर में मेरा खूब स्वागत हुआ । अच्छा, आज बड़ी देर हो गई । इन उ पटांग बातों में ही आपका अधिक समय ले लिया । अब दो एक मेरी कविताएँ सुनकर अपने घर जाइये । शेष फिर कभी सुनाउँगा ।

* *

नमस्कार

हे आलू सलजम नमस्कार ।
हे अलगम बलगम नमस्कार ॥
हे भैया भौजी नमस्तकार ।
हे साग कलौंजी नमस्कार ॥

हे लोटा थरिया नमस्कार ।
आफत की पुड़िया नमस्कार ॥
हे प्याली प्याला नमस्कार ।
हे साली साला नमस्कार ॥

हे सायर माता नमस्कार ।
बुढ़िया का काता नमस्कार ॥

मिट्टी के भाँड़े नमस्कार।
हे बेचन पाँड़े नमस्कार॥

हे आबा काबा नमस्कार।
फरहारी बाबा नमस्कार॥
गद्दे की काठी नमस्कार।
रामनरेश त्रिपाठी नमस्कार॥

हे लतिहर छुतिहर नमस्कार।
हे चर्चिल हिटलर नमस्कार॥
हे बड़हर कटहर नमस्कार।
हे महुआ गूलर नमस्कार॥

हे राजा रानी नमस्कार।
हे बुढ़िया नानी नमस्कार॥
हे माई मौसी नमस्कार।
नगर चँदौसी नमस्कार॥

हे बंडा अरुई नमस्कार।
हे बल्लर बरई नमस्कार॥
हे मोटर गाड़ी नमस्कार।
बंगाल की खाड़ी नमस्कार॥

हे कुर्ता बंडी नमस्कार।
हे दाल की मंडी नमस्कार॥
हे सुन्दर रंडी नमस्कार।
हे काली झंडी नमस्कार॥

हे काबा कासी नमस्कार।
हे लल्ला पासी नमस्कार॥
हे ताजा बासी नमस्कार।
प्यादा चपरासी नमस्कार॥

हे गोटन भाई नमस्कार।
हे झिरमिट ताई नमस्कार॥
गिरधारी हेलवाई नमस्कार।
हे काली भाई नमस्कार॥

——

पोंगा-पुराण

गुरोवाच—

पोंगा पुराण की दिव्य कथा, सुन लो शिष्यों धर कान।
खूब कचाकच माल उड़ाओ, खाओ मघही पान॥
सदा हर हर हर बोलो।
घर का फाटक खोलो॥
घी औ' शक्कर घोलो।
मत अपनी गाँठ टटोलो॥

वेद शास्त्र का सार यही, पोंगा पुराण है दिव्य।
भात भूत सब भरा पड़ा है, वर्तमान भवितव्य॥
पोंगा पुराण है सार।
बिस्तुइये का अँचार॥
जो खाय मसालेदार।
उतरे भवसागर पार॥

+

चोरी कर लो, जूआ खेलो, हो जाओ बेशर्म।
सैर करो पसरहट्टे की है यही सनातन धर्म।
हरिनाम कभी ना जपना।
माल पराया हड़पना॥
संसार को समझो अपना।
है चंद रोज का सपना॥

+

दुनिया के आदर्श लोग, सभी यही कार्य हैं करते।
नाम कमा कर झौआ भर, कौआ हो करके मरते॥

जिन्ना साहब हैं भाँड़।
गाँधी भारत के साँड़॥
जवाहर खाते खाँड़।
चर्चिल पीते माँड़॥

+

चेम्बरलेन खाया करते थे, नेनुआँ की तरकारी।
तभी चले बैकुण्ठ गये, सब छोड़ बाप महतारी॥

तुम भी बैकुण्ठ चलोगे।
उर्द की दाल दलोगे॥
यमराज को तेल मलोगे।
संड मुसंड पलोगे॥

+

मुसलमान के घर में जाकर शोरवा गटको गटपट।
मियाँ घर में रहे नहीं, बीबी ले भागो चटपट॥

इसमें मत देर लगाना।
होगा पीछे पछताना॥
लैला पर हो दीवाना।
हो जाना जेल रवाना॥

चेला गण ऊचूः—

जय पोंगा गुरुदेव, आप तो सार का सार सुनाते।
धर्म अर्थ अरु काम मोक्ष, पाने का तार बताते॥

आप बड़े गुन वाले।
गोरे हैं ना काले॥
मुरगी के रखवाले।
तुलसिदास के साले॥

+

गुरुवर का गुणगान करेंगे, रात और दिन भर।
नित उठ चरण पादुका धोयें, कहें कभी ना लतिहर॥
गुरू का ज्ञान अगम है।
मूली है, सलजम है॥
इन्सिण्डियरी बम है।
ना बेसी है, ना कम है॥

गुरोवाच—

धन्य धन्य सब शिष्य हमारे, बड़े योग्य मस्ताने।
कोई कोई एकदम अन्धे, कोई एकदम काने॥
तुम हो गुड़ की भेली।
कोई धोबी, कोई तेली॥
गुलरोगन और चमेली।
करो आज अठखेली॥

——

सार!

सार हो,
धरा पै,
तुहीं!
मेरे एक मात्र सार!
जीवन-जंजाल-सिन्धु,
तुहीं!
तर्णहार हौ!
हार हौ,
विभूति,
मेरी पत्नी की शुभ्र ज्योति—
जीर्ण शीर्ण नैया के,
नाविक,

पतवार हौ !
वारि हौ,
पिपासित के हेतु, 'मोची',
निधिनीर !
काव्य, कला-कौशल के,
जीवित,
अवतार हौ ।
तार हौ,
अभागी,
मम पत्नि की,
वीणा के—
तार !
सार हौ !
हमारे सगे,
यार !
बड़े सार हो !

* *

प्रभु !❀

प्रभु जी तुम चंदन, हम पथरा ।
निशि दिन संत लगावैं रगरा ॥
प्रभु जी तुम दीपक हम करिखा ।
मुँह में पोते नाचै लड़िका ॥
प्रभु जी तुम घन न, हम घोड़ा ।
जैसे चितवे चंद चकोरा ॥

❀ रैदास रचित एक कविता हास्य रूपान्तर ।

प्रभु जी तुम मोटर हम ताँगा।
जैसे जार्ज षष्ट और साँगा॥
प्रभुजी तुम सुथनी हम धागा।
जैसे सोनहि मिलत सुहागा॥

* *

'सूरदास' के कुछ आधुनिक पद

शोभित कर अखबार लिये।
हुमकत चलत, तेल तनु मंडित, मुख स्नो लेप किये॥
फूले गाल, लाल लोचन, कछु सोच न बसति हिये।
ऐरन चारु कपो परसिकर, मादक मदहिं पिये॥
सविता और माधुरी सबकी ब्यूटी मात किये।
'मोची' धन्य एक पल या सुख, का शत कल्प जिये।

+

भौजी कबहिं बढ़ैगी ब्यूटी!
किती बार मोहिं पानी पिवत भई अबहुँ न बनी परोठी॥
तू तो कहति भिनुसार होत ही, दूँगी जौ की रोटी।
काढ़त गुहत अन्हावात ओंछत, तुम अपनी ही चौटी॥
काँच में पानी पियावत फच्च फच्च, देत न आलू रोटी!
'मोची' चिरजीवै मुसोलिनी औ' हिटलर की जोटी॥

+

गदही के पय पियहुँ लाल जी, तेरी ब्यूटी बढ़ै।
सब देवरन सो अधिक मुटाई, तन पर माँस चढ़ै।
पी पी भंग होहुँ मतवाले, तब बल बेस बढ़ै।
पासिंग शो सिगरेट हाथ में धूँआँ खूब कढ़ै॥
पाउडर और लिपस्टिक से तब मुख पर लाली चढ़ै।
'मोची' निरखि हँसत भौजी, अति, सों सुख मुख न कढ़ै॥

उधो जी हमको नाच सिखैये।
केहि विधि कमर हिलावैं हम सब, सो सब जतन बतैये ॥
हृदय और स्वातन्त्र्य छीन कर, बिन घर द्वार करैये।
हम दुखियन को जेहि विधि चाहे, तातक थेई नचैये ॥
आप समुन्दर पार बसे हो, पाँव यहाँ पै लैये।
'मोची' आजादी को झंखैं, आप सुखी ह्वै रहिये ॥

* *

तमन्ना !

सदा लीला चिटनिस पुकारा करेंगे।
य' दिन बम्बई में गुजारा करेंगे ॥
चलेंगे अभी 'बाम्बे टाकिज में' हम तो,
वहाँ चल के झाड़ू बुहारा करेंगे ॥
कभी आयेंगी कार पै चढ़ के अपनी—
तो पहियों पर हम पानी डारा करेंगे ॥
'मोची' व' आयेंगी घूम के शहर से—
तो पैरों से चप्पल उतारा करेंगे ॥
अशोक और उनकी हो जोड़ी मुबारक।
हम यूँ ही अब घासें उपारा करेंगे ॥

* *

मीराबाई के आधुनिक पद

मोरी लागी लगन गुड़ चिउरन की।
चिउरा बिना मोहे कछु नहि भावे, झूठ माया रसगुल्लन की ॥
टाँडा फाल सब सूख गया है, फिकर नहीं मुझे सैरन की।
'मोची' कहैं मेरे प्रभु नगनाचन, नाचो नाच जरा बनरन की ॥

आली रे मेरे पैरन बर्छी गड़ी।
चित चढ़ी मिस नाडिया की सूरत, बीच कलेजे अड़ी।
'हे हे' करि हंटर फटकारत, हंटर वाली खड़ी।
'मोची' तौ बिन मोल बिकानौं, लोग कहैं है सिड़ी॥

* *

चोंच में खरोंच।

ह्वै कै कलक्टर मोटरन पै चढ़यो तो कहा—
जो पै पब्लीकन को चना चबवायो ना।
पढ़ि पढ़ि गदहा प्रवीण हूँ भयो तो कहा—
विनय विवेक युत च्चीं पों ज्ञान गायो ना॥
"मोची" कहत धन धुनियाँ की भयो तो कहा—
जो पै कुस्तुनतुनियाँ जाय घूम फिरी आओ ना।
गरजि गरजि बम गोलनि गिर्यो तो कहा—
हिटलर के चोंच में खरोंच एक, नायो ना॥

÷

दीरघ साँस न लेय दुख, सुख साईं मत भूल।
माई माई क्यों करत है, माई मरी सो कबूल॥

* *

माधुरी!

बम्बई को बसिबो न भलो—
अनदेखे ही लोग कलंक लगावत।
देख्यो न मैं मिस माधुरी कौ,
पै कहैं सब तेरे लिये इत आवत॥
जौ यह साँची करी सबहूँ तौ—
महाकवि 'मोची' सबै बनि आवत।

री 'रणजीत' की उज्वल तारिका
माधुरी तेरी किसे नहिं भावत ॥

\+ + +

सुलोचना !

रसीले हैं लोचन तेरे सुलोचना !
बाम्बे की खोरिन सों कढ़ती हौ।
लाखन को मन मोहि लियो,
निज कार की झाँझरि सी झँकती हौ ॥
'मीची' कहैं तुम हौ कपटी,
तिरछी अँखियाँ करिकै तकती हौ।
न जाने कि खाती हो मुर्ग-मुसल्लम—
कि या तुम मीठी 'हनी' चटती हौ ॥

\+ + +

फिल्म 'कङ्कन' के गाने।

कलकत्ते चली री गुइयाँ।
खूब सलोने, बिकै खिलौने, घुघुरु औ' घुन घुनियाँ।
कलकत्ते चली री गुइयाँ ॥
इधर उधर बहु मोटर दौड़ें, पीं पीं करतीं रेलियाँ।
साँझ होत ही चमक उठै, सब सड़क और सब गलियाँ ॥
कलकत्ते चली री गुइयाँ ॥

\+ + +

मैं तो आरती उतारूँ गधे राम की।
गधे राम की रे, धोबी धाम की रे ॥

कान के कपाट खोल, पाँव से खूँटा टटोल,
चींपों चींपों बोल बोल,
मैं तो खड़ा छवि निहारूँ गधे राम की रे।
मैं तो आरती…………

\+ + +

अरे रे कबीर, सुनले कबीर।
जेकरि मेहरि धान कुटि के, पैसा लेय जुटाय।
ते बरबीर पुरुष कहवावें बैठे बैठे खाय॥
अरे रे कबीर, सुनले कबीर।

\+ + +

झिरमिट!

नाऊ एक बड़ा शैतान।
सबको करता है हैरान॥
कैंची उनके पास नहीं है।
कंघी की कुछ बास नहीं है॥
छूरा नहीं तेज रखता है।
जो जी में आवै करता है॥
जहाँ कहीं धन लुटता हो, वह धावै लेकर चिटवा।
नाऊ एक बदमास, वही महुवरिया को झिरमिटवा॥

\+ + +

झिरमिट मेरा नाम, बाबूजी, झिरमिट मेरा नाम।
जजमानों के नरम नरम गालों पर रखकर छूरा॥
खरे खरे सब खींच खाँच कर, करता काम अधूरा।
मेरी सब खिदमत करते हैं, हाकिम औ' हुक्काम॥ बाबूजी०

\+ + +

फिल्म 'बन्धन' के गाने

चल चल रे गाड़ीवान !
अजब है तेरी शान धान, चल रे गाड़ीवान !
चल चल रे गाड़ीवान ॥
है सड़क भी खराब, छाने तू शराब।
तू फिर भी चला चल, आगे को बढ़ा चल ॥
रुक रे ! मत यहाँ पर, नहीं ऐंठ दूँगा कान। चल चल रे०

\+ + +

अपने कुत्ते को नाच नचाऊँगी, नाच नचाऊँगी।
सारे घर भर में ढोल बजाऊँगी, नाच नचाऊँगी ॥
भौं भौं कर दौड़ेगा प्यारा-सा कुत्ता।
नाचेगा झम झम पहन मेरा जुत्ता ॥
मैं थप-थप थपोड़ी बजाऊँगी, नाच नचाऊँगी ॥

\+ + +

कैसे पियोगे, अब तुम कैसे पियोगे—
ओ शराबी साजना, कैसै पियोगे ॥
अब न मिलेगा तुम्हें बोतल औ' पियाला।
पा न सकोगे तुम बच्चन की व' हाला ॥
अब बताओ कैसे गटागट पिओगे।
ओ शराबी साजना.................॥

\+ + +

पें पें बोल पें पें बोल—
मेरी पिपिहरी पें पें बोल।
जो सुनले उसके कानों में, करने लगे खूँट कल्लोल—
मेरी पिपहिरी पें पें बोल ॥

\+ + +

रुक न सको तो जाओ, तुम जाओ।
एक मगर हम सब की रखना बात।
कभी कभी खा लेना बंडा भात ॥
हम तो बंडा दे न सकेंगे, तुम चाहे मँगवाओ ॥
तुम जाओ ॥

\+ ÷ +

मित्र !

मित्र तुन गदहा क्यों न भये ?
काहे भये तुम काठ को खूँटा, पगहा क्यों न भये ?
क्यों न भये तुम बन की गिलहरी, बकुला क्यों न भये ?
बने रुखानी बेमतलब के, बसुला क्यों न भये ?
गाँधी जवाहर बने खूब, तुम जिन्ना क्यों न भये ?
सीधे साधे साधु बन गये, टिन्ना क्यों न भये ?
तुम चार्ली बन गये यार, लीला चिटनिस न भये ?
वाहियात की हिन्दी भाषा, तुम इंगलिश न भये ?

\+ + +

योगिराज !

पिनकि चलत योगिराज, पाँयन झुनझुनियाँ।
कपार पै तिलक विशाल, अँखियाँ हैं लाल लाल—
श्वेत हैं हर एक बाल, पोते तेल पनियाँ ॥ पिनकि चलत···
खाते बदाम पाग, साथ में बथुआ का साग—
गाते विहाग राग, बाजै हरमुनियाँ ॥ पिनकि चलत...

÷ + +

मेरी वाच !

(बतर्ज—'न जाने किधर आज मेरी नाव चली रे'—फिल्म 'झूला')

न जाने कैसे आज मेरी वाच चली रे।

चली रे, चली रे, मेरी वाच चली रे ॥
कोई कहे ऐसे चली, कोई कहे वैसे चली।
सालों से बन्द, कैसे आज चली रे ॥
चली रे, चली रे, मेरी वाच चली रे।
मन के मीत मेरे देख ले जल्दी।
सालों से बिगड़ी, पर आज कैसे चल दी ॥
देखो चली, खूब घसाघस्स चली रे।
चली रे, चली रे, मेरी वाच चली रे ॥
किट किट किट करती हुई वाच मेरी डोले।
जैसे आधी रतियाँ में झिंगुरवा बोले ॥
पनरुआ ! मुझको बता—मेरे चप्पल का पता—
बोल, कैसे आज बिन चलाये चली रे।
चली रे, चली रे, मेरी वाच चली रे ॥

\+ + +

ननदी के भैया।

ननदी के भैया ! किधर चले, तुम किधर चले ?
मार्केट में है भीड़ घोर।
हैं कहीं गिरहकट कहीं चोर ॥
इस धक्कम धुक्का में पड़कर—
मैं जाऊँगी झकझोर झोर ॥
तुम छोड़ मुझे असहाय चले, तुम किधर चले ?
ननदी के भैया ! किधर चले, तुम किधर चले ?
कैसे घूमूँ इधर उधर मैं।
लुच्चे लफंगे लगें डगर में ॥
बोली बट्टा बोल बोल—
परेशान करेंगे बीच शहर में ॥

अकेली मुझको छोड़ चले, तुम किधर चले ?
ननदी के भैया ! किधर चले, तुम किधर चले ?
तुम रमदेइया के यार बने।
तुम दुनिया भर के सार बने॥
मेरे मजनू ! तुम मजनू बन—
सैकड़ों के ही खरीदार बने॥
मुझसे क्यों नाता तोड़ चले, तुम किधर चले ?
ननदी के भैया ! किधर चले, तुम किधर चले ?

\+ + +

भैया के सगे सार !

तुम हो भैया के सगे सार !
मम सास ससुर के लाल तुम्हीं।
ससुराल के सुन्दर बाल तुम्हीं॥
जग के, इस अनुपम उपबन के,
तरुवर के पत्ते डाल तुम्हीं॥
है ब्यूटी भरी तुम में अपार।
तुम हो भैया के सगे सार॥
तुम बहनोई के दीवाने।
तुम गर्दभ स्वर के मस्ताने॥
छम छम करती गुलगुलियों के—
तुम अविचल प्रेमी रस साने॥
घुस पड़ो गली में एक बार।
तुम हो भैया के सगे सार॥
यह जीवन है झंखार भरा !
भौजी का सुमधुर प्यार भरा॥
सब गली और फूलों का 'मोची'।
कूड़ा औ" कतवार भरा॥

प्यारे ! पग पग रखना सम्हार।
तुम हो भैया के सगे सार॥

—

फख !

कहाँ रे फख मारन जाई।
जहँ जाईं, तहँ रहें सिपाही, सिविल गार्ड के भाई॥
एक दिवस हम गये सिनेमा, फ्री पास नहिं पाई।
मैनेजर ने 'आ म सारी' कह नेबुआ नून चटाई॥
हम दिन रात अकेले रहते, होती नहीं सगाई।
तुम पर माला फूल चढ़ाऊँ, जै जै काली माई॥

—

झिरमिट की कहानी—उसकी जबानी

परसोतम हउ नाम, मुना,
सब झिरमिट कहि के गुहरावैं,
जइसे बिलाइति पढ़ि पढ़ि के—
सब पिल्ली पिल्ला सुहरावैं॥

हम तउ दुखिया दीन हई—
हमरे घर का रक्खा बटाइ।
हम दीन भर बार सार मूड़ी—
मुल रात्रि बेर भोजन घटाइ॥

सब गुहरावैं, "हरे ससुर।
झिरमिटवा, का करत हये॥"
इधर उधर दउड़त दउड़त,
हम दीनउँ दुनिया सबसे गये॥

ऊ जवन राम नन्दन पाँड़े—
हमरे गउवाँ क पास अहेन।

हमके गुहरावैं, 'हरे ससुरवा !'
जनु हम उनकर बाप अहेन ॥

हम तउ पढ़ा लिखा नाहीं,
पुनि बरदमूत का पहिचानी ।
हम त ताऊ नाऊ क जात रहेन—
पुनि पोथी पोथा का जानी ॥

हम दिन भर छूरा टेय टेय,
आउ सब क दाढ़ी भेय भेय,
हम खूबइ मूड़ी खर्र खर्र—
सब हीं से पइसा लेय लेय ॥

हमरे माई अउ बाप नहिन,
हमरे में पुन्न और पाप नहिन ।
हम वैसइ कुरता बनवाई थ—
ओकर कउनउँ नाप नहिन ॥

हमरी मेहररुआ बड़ी सोख—
ऊ पहिरे कड़ा छड़ा झुमका ।
ऊ खूबइ झम्म झम्म कूदइ—
जस हन्नी कूदइ जँगल मा ॥

हमके सब केउ घोंघा समुझैं—
अउ अपने कैं बड़ विद्मान ।
हम सबके छत्तिस बुद्धि पढ़ाई—
के वाइट हमरे समान ॥

हमके इक लड़िका राम दिहिन—
मुल ऊ देसन का सार भवा ।
जनु हमहन ओकर बाप नहीं,
ऊ बड़का बाप हमार भवा ॥

तब एक दिन हम गुस्सा में,
खुब कझका पटका जोर ।

ओके समुझावा बिगड़ि बिगड़ी,
खुब डाटि डाटिं नेकुरा सिकोर ॥
"हम तोहके केतनउँ समुझाई,
तू बड़ लड़िका क पोंछ बन्य।
हम झिरमिट नाऊ रहिगे औ,
तू बड़ 'मोची' अउ 'चोंच' बन्य ॥
ऊ समझेस एक्कउ बात नहिन,
उल्टा हमके गरिआइ दिहेस।
हम डरि के पाछे हटत गये,
ऊ बढ़ि बढ़ि अउर सटाइ दिहेस ॥

+

हमरे घरवा के बगलइ में,
अहिरान बाय, उँह अहीर बसैं।
भैंसी भैंसा, पँड़ई पड़वा,
खुब एहर ओहर सब फिरैं ॥
ऊँह एक समै सब गोरुन के,
बीमारी पकड़ेन बड़ी जोर,
सब बाँय बाँय चिल्लाय लगे—
भागे सर पर खूँटा निपोर ॥
तब अहिरन में घपहट मचि गइ—
अउ दौड़ेन सब लेइ लेइ डंडा।
केउ दउड़ा पहिने निमिस्तीन—
केउ केउ वैसइ एकदम नंगा ॥
घंटा भर में तब सब गोरुन के,
किहिन इकट्ठा मारि मारि।
मुल सब गोरु चिल्लात रहैं,
खुब नटइ गटई फारि फारि ॥

यक वैदराज दउड़इ आयेन,
अउ कहिन सुना हो सब अहिरान।
जस हम कही उहै कइ। डारा,
नाहीं त बचे न एक्कौ प्रान॥

लोहे क डंडा गरम करा,
अउ दागा सबके चुतरे पर।
पल में गोरू टीक होइगे—
ई बिमारी उतरे पर॥

इहै जतन सब किहेन,
बेमारी सब गोरुन क भाग गई।
पुनि घास पात सब खान लगे—
सब क इज्जत मरजाद रही॥

मुल थोड़इ दिन के बाद एक—
पंडित उइ गउवाँ में आवा।
उँह पूजा पाटी करन बदे—
सब पोथी पत्रा फैलावा॥

पुनि पढ़त लगाऊ जोर जोर—
पोथी क पन्ना उलटि उलटि।
सुनतइ सब अहिरन दउड़ परेनि—
बस आपुन पल्ला झटकि झटकि॥

"काहो रामधीन बुढ़ऊ !"—
"यक अहीर बोंग तब बोल उठा।
इहै बेमरिया हउना, जउन,
हमरे गोरुन के भवा रहा॥

लोहे क डंडा गरम गरम,
दागौ चुतरे पर भक्क भक्क।
ई अला बला भागैं पल माँ,
उतरइ एकर सब बक्क झक्क॥

पंडितवा ऊ चिल्लाय लाग,
मुल अहिरिन झटपट काम किहिन।
लोहे क डंडा गरम गरम,
ओकरे चुतरे पर दाग दिहिन॥
उहीं गाँउ में हमहूँ बाई—
हमहूँ बड़ बुधिमान हई।
हम दुनिया भर के घास चराई,
कहउ कउन बेइमान हई॥

÷

अहिरन के यक मुखिया बायेन,
ऊकर घुरहू नाम अहै।
अपने माई के कामें में—
पंडित बोलवायेन कथा कहै॥
पंडित बोलेन, "देख्य घुरहू!
हम जउन कहब, तूँ उहै कह्य।"
घुरहू चउधिरी खुशी हुइ कै,
बोलेन, "पंडित! तू भले कह्य!"
पंडित बोलेन, "ल्य चिरुआ में जल"—
घुरहू कहेन, "तुहीं लेइ ल्य।"
पंडित बोलेन, "आचमनी करो"—
तब घुरहू कहेन, "तुहीं कइल्य॥"
पंडित के कुरोध होइगा,
तब बोलेन, "करे घुरहुआ सार!
तइ हमहीं के पाट पढ़ावइ—
आपुन काहे न करते कार।"
बातन बात तरक चढ़ि आवा,
बरसन लागा मुक्का लात।

घुरहू कचरेन पंडित के तब,
पंडित जी भागेन अललात ॥
हमरे गाउँ में रोज रोज,
अस दुनिया भर की बात होत
कत्ताउँ केउ सिरहा गाइ रहा—
कैत्ताउं जूती पैजार होत ॥

÷

अब हम आपुन बात कही—
हमरे घर चून पिसान न बा।
दूसरे ससुरी ई छिड़ी लड़ाई—
कत्ताउँ लगत ठेकान न बा ॥
हम गयन एक लाला के घर,
अउ कहा, "हजूर आला वाला !
हमके जउ नौकर रखि ल्य तू—
तउ काम करब हम चउकाला ॥"
तब लाला कहलेन, "नउ रुपिया पर,
हम तोके नउकर रखबइ ।"
हमहूँ बोलेन, "तब दउड़ी दउड़ी के—
हम हजूर सब कुछ करबइ ॥"
हम करन लगे नउकरी जहाँ,
तब हमरी सान अउ बान बढ़ी,
लेकिन यक दिन लाला कहलेन,
"हउवे बड़ा उजड्ड सिड़ी ॥
जे केउ आवइ दरवाजे पर,
ओके तइँ सलाम करत नाहीं ।
कइसन बा तोर मिजाज भवा—
ई हमके समुझि परत नाहीं ॥"

हम बोलेन, "अब अइसन गलती,
होई न तू सुनि ल्य हजूर।
अब जे केउ आये दरवज्जे पर—
हम सलाम करि लेब जरूर ॥"

एक दिना लाला क धोबी—
आपुन गदहा लइ आवा।
हम कहा, "सलाम हो धोबी!"
गदहउ के सलाम हम कइ आवा ॥

हँसइ लगा धोबिया ही ही ही,
हमके बड़ गुस्सा लागा।
आइ गयेन लाला एतनइँ में—
ऊ आपुन सब लइ भागा ॥

एक दिना केउ चोर घुसा,
लाला के घर में सर्र सर्र।
जब सेंध लगावै भीती माँ—
तब माटी भसकइ भर्र भर्र ॥

"के हउ हो"—हम गुहरावा,
तब चोरवा बोला—"केउ नाहीं।"
हम तानि बिछौना सूती रहे—
भिनुसार उठे, तब सब नाहीं ॥

लोटा थरिया, गहना गुरिया,
हंडी हंडा गायब हुइगा।
ऊ चोर ससुरवा रहा नहिन,
ऊ झुट्ठन कइ नायब हुइगा ॥

\+ + +

एक बेर नेउता आवा,
लाला जी के ससुरारी से!

हम अउ लाला संग चले—
कपड़ा पहिरे हुसियारी से ॥
जब ससुरारी के निकचाने,
तब बोलेन, "सुन रे झिंगमिटवा।
ई ससुरार हमार धनी बा—
माल मिले भरि भरि छिटवा ॥
तोके हम सबही कुछ देवइ—
अउरी दउरी अण्डा बण्डा।
तई खूब बड़कइ हाँके, अउ,
उँह खड़ा रहे थामे डण्डा ॥"
"हे लाला! तोहरी बतियाँ सुन
अब मोरि खोपड़ी अँउधी होत।
अब कइसन से मरजाद बची—
मुल रतियाँ हमइँ रतउँधी होत ॥"
बातइ करत करत हम दूनउँ,
जब जब पहुँचि गये ससुरार।
लाला क खातिर खूब भवा—
सब मगन भये सरहज अउ सार ॥
राति भवा तब हमइँ सूझि,
ना परई रतउँधी के मारे।
लाला के संगे खाइ गये,
हम टकटोरत आगे पाछे ॥
हम बनि के आन्हर बैठि गये,
एक पीढ़ा पर चउका बाहर।
केउ हमरे आगे थरिया रखिगा—
खाई लगे हम गबर गबर ॥
हम मुँह में कबर धरे जाई,
लेकिन कुछ नाहीं सूझि परा।

कुछ खुर खुर बोला बगले—
हम समुझा बाकरी या बाकरा ॥
बस आउ ताउ देखा नाहीं—
यक हाथ पिठाई पर मारा।
हम सोचा जउ मारित नाहीं,
तउ खाइ लिहे भोजन सारा ॥
मुक्का लगतइ बोला धम से—
ऊ जोर जोर अललाइ लाग।
हमके सुनि के अचरज हुइगा—
ऊ माई माई चिल्लाय लाग ॥
हम सुना कि ऊ बाकरा नाहीं—
लाला का छोटका सार रहा।
हमके सब बहुतइ गरिआयेन—
मुल हम सब कुछ मन मार सहा ॥
लाला खूब कसि कसि के खायेन—
पूड़ा पड़ी अउ मालपुआ।
सेरन से उप्पर रगड़ि लिहेन,
जनु पेट नहीं, भरसाँय भवा ॥
जब अधराती क बेला भइ—
लाला के झाड़ा लगा जोर।
धीरे से हमके गुहरायेन,
"झिरमिटवा! अबका करी, बोल!"
हम बोले, "हे लाला! सुनि ल्य,
अब चुप्प मारि के गड़ा रह्य।
झाड़ा झाड़ी गा भरसाईं मे—
ओढ़ना ओढ़े पड़ा रह्य ॥"
लाला बोलेन, "सुन बड़ी जोर से,
झाड़ा हमके लगल बाय।

तू सरऊ अरबी बूँकि रह्य—
हमरे जानइ पर पड़ल बाय ॥
कइसउँ कइसउँ मेल्हत मेल्हत,
लाला काटेन ऊ रात सकल।
भिनुसारे जब झाड़ा गइलेन—
तब गई बेकली तुरत निकल ॥
ऊ दिन से लाला फिर कबहूँ—
ना आयेन अपनी ससुरारी।
सब सास ससुर बिनती करते—
अउ सरहज भी समुझा हारी ॥

\+ \+ \+

सखि!

तुम काली, मैं गोरा हूँ सखि !
तुम गोबर से भरी नाँद !
मैं घी से भरा कटोरा हूँ सखि !
तुम काली, मैं गोरा हूँ सखि !

\+ \+ \+

तुम 'फैट' और मैं 'थिन'—
तुम रात और मैं दिन।
तुम बिस्सू की अड़ियल घोड़ी—
मैं तो नबी का घोड़ा हूँ सखि !
तुम काली, मैं गोरा हूँ सखि !

\+ \+ \+

तुम सड़ी सोप, मैं 'लक्स'—
तुम सियारिनी, मैं 'फाक्स'—
तुम तीस बरस की चच्ची सरीखी—

मैं तो बिल्कुल छोरा हूँ सखि।
तुम काली, मैं गोरा हूँ सखि !
+ + +
तुम सूपनखा, मैं राम—
तुम इमली हो मैं आम।
तुम पटुये की मोटी रस्सी,
मैं रूई का डोरा हूँ सखि !
तुम काली, मैं गोरा हूँ सखि !
+ + +
तुम गुड़ और मैं लड्डू।
तुम गधी और मैं टट्टू।
तुम लैला की फटही थैली—
मैं मजनू का झोरा हूँ सखि !
तुम काली, मैं गोरा हूँ सखि !
+ + +
तुम 'माउन्टेन' मैं 'हिल'
तुम टाँग और मैं दिल।
तुम हो सेंधा नमक की गाड़ी—
मैं चीनी का बोरा हूँ सखि !
तुम काली, मैं गोरा हूँ सखि !
+ + +
तुम 'सी' और मैं 'पान्ड'—
तुम चुहिया, मैं हूँ आन्ट,
बस एक कमीं मुझमें भारी—
तुम पढ़ी लिखी, मैं कोरा हूँ सखि !
तुम काली, मैं गोरा हूँ सखि !
+ + +

रोना !

मुझे रोना आ रहा है।
वह उधार देखो, खदेरुआ,
बैठ कर मुसका रहा है।
मुझे रोना आ रहा है॥

\+ + +

आपको ताज्जुब बहुत होगा,
कि मैं उल्टा गिरा।
जब कि मैंने यह खबर सुन ली—
कि चूहा आ रहा है॥

\+ + +

जनम भर मरता रहा—
तेरे मुँहासेदार मुँह पर।
अखिरी दम पर भी काफिर—
मुझको क्यों तरसा रहा है॥

\+ + +

जब कि उसने अधकटी मूँछें मेरी,
देखी वहाँ।
हँस के बोला, या खुदा !
कोई मुखन्नस जा रहा है॥

\+ + +

मैंने लिख लिख कर किताबें,
कर दिया खाली दिमाग।
बीबी को कैसे लिखूँ खत,
सर मेरा चकरा रहा है॥

÷ ÷ ÷

मेरे सर में दर्द था,
'एस्प्रो' बहुत खाया मगर।
दर्द सर तो उड़ गया,
अब दर्द दिल तड़पा रहा है॥
+ + +
मुझे रोना आ रहा है।

तुम कौन?

तुम कौन कहाँ से आये?
कन्धे पर फटहा कुरता है।
मुँह जैसे कटहा कुत्ता है॥
यह लकड़ी जैसा तन लेकर,
तुम क्यों बल खाते आये?
तुम कौन कहाँ से आये?
+ + +
हाथों में इकन्नी खोटी है।
सर पर झोआ भर चोटी है॥
मोटी-सी लाठी लेकर तुम,
क्यों भेंड़ चराने आये?
तुम कौन कहाँ से आये?
+ + +
भारत माता के लाल तुम्हीं।
जननी के सर के बाल तुम्हीं॥
पनही के जैसा चुचुका,
अपना 'फेस' दिखाने आये।
तुम कौन कहाँ से आये?
+ + +

धनहीनों की लाज हो तुम।
काशी के दैनिक 'आज' हो तुम॥
मेरे खेतो में घास नहीं,
क्यों खुरपा लेकर आये?
तुम कौन कहाँ से आये?

+ + +

तुमको खाने को, मटर नहीं।
'पोलसन्' का थोड़ा 'बटर' नहीं॥
तुम 'टी' और 'आँमलेट' के बदले—
सत्तू खाते आये।
तुम कौन कहाँ से आये?

+ + +

दुनिया भर का दुख देखा।
सुरसा का भीषण मुख देखा॥
हनुमान सरीखे दुखी—
दीन बन्दर बनकर क्यों आये?
तुम कौन कहाँ से आये?

———

धनुष-यज्ञ

(आधुनिक दृश्य काव्य)

(यह शुद्ध हास्य के लिये लिखा गया है। कोई धार्मिक सज्जन बुरा न मानें। इस प्रहसन के लिखने में कुछ प्रसिद्ध पुस्तकों की सहायता ली गई है।)

दृश्य १

हिज मैजेस्टी महाराज दशरथ एक सोफा पर बैठे हुए सिगरेट का कश खींच रहे हैं। उनकी दाईं बगल प्रिंस राम, लक्ष्मण तथा बाईं बगल प्रिंस भरत और शत्रुघ्न बैठे हैं। हाल खूब सजा है। अंग्रेज पेन्टरों द्वारा दीवालों पर विचित्र चित्रकारी की गई है। कहीं-कहीं बहुत बड़े आयल पेन्ट्स टँगे हैं। कमरे में एक हजार बोल्ट के कई बल्ब जल रहे हैं। आदम कद्द शीशे भी टँगे हैं। सामने ही अँग्रेजी ढँग की पोशाक पहने हुए कई नर्तकियाँ नृत्य कर रही हैं। उनके पैरों में एड़ीदार जूते हैं। महाराज दशरथ चुपचाप सिगरेट पीते हुए नृत्य देख रहे हैं। कभी-कभी अपना बूट जूता संगमरमर की फर्श पर खट्-खट् करने लगते हैं। अपने सर पर का मूल्यवान हैट उन्होंने उतार कर बगल में रख दिया है। प्रिन्स लोग अपने हैट सर पर ही रखे हैं।

दशरथ०—(कलाई घड़ी से टाइम देखते हुए) बस करो। बहुत हुआ, अब नाच बन्द कर दो। (नाच बन्द हो जाता है। नर्तकियाँ झुककर अभिवादन करती हैं) खूब! खूब! आज तुम लोगों ने वह नाच दिखाया कि इंगलैंएड और फ्रांस भी मात हो गया। अपनी पिछली टूर में जब मैं इंगलैंड, स्काटलैंड, फिनलैंड जटलैंड, स्विटजरलैंड आदि स्थानों पर घूमा था, तो कहीं भी ऐसा नाच देखने को नहीं मिला।

राम०—क्यों पिताजी! पश्चिम की स्त्रियों के विषय में आपकी क्या राय है।

दशरथ०—चुप बेवकूफ! हमेशा औरतों की बात पूछा करता है। जा भीतर! अम्मा के पास बैठकर रेडियो सुन!

भरत०—पिताजी! इधर सिनेमा दिखाने नहीं ले चले। किसी दिन चलिये!

दशरथ—चलूँगा किसी दिन। कैकेयी तो तुम्हें छुट्टी ही नहीं देती, तो सिनेमा कैसे देखोगे ? (द्वारपाल आता है—द्वारपाल से) क्या है सतुआ ?

सतुआ०—योर मैजेस्टी !

दशरथ०—(बिगड़ कर) मैजेस्टी फैजेस्टी रहने दे। सीधे से बोल, क्या है ? बोलता क्यों नहीं—बोल ! बोल !

सतुआ०—हिज होलीनेस राजर्षि विश्वामित्र पधारे हैं और प्रहरियों को अगट-सगट सुना रहे हैं।

दशरथ०—(उतावली से) उन्हें भेज—जल्दी भेज !. (अधजला हुआ सिगरेट फेंककर दूसरा जलाते हैं)

(राजर्षि विश्वामित्र आते हैं)

विश्वा०—कहिये, कहिये योर मैजेस्टी ! सब खैरियत तो है ?

दशरथ—(सोफे पर से उठते हुए) सब खैरियत है योर होलीनेस ! आइये, आइये ! (आगे बढ़कर शेक हैण्ड की रस्म अदा करते हैं, विश्वामित्र एक दूसरे सौफे पर बैठ जाते हैं। महाराज दशरथ पुकारते हैं) सतुआ ! जरा दो कप चाय और आमलेट लाना भई ! (विश्वामित्र से) आज कहाँ से टपक पड़े राजर्षि ?

विश्वामित्र०—क्या करूँ योर मैजेस्टी ! काम से इतनी कम फुर्सत मिलती है आपके पास आने की इच्छा रखते हुए भी जल्द न आ सका। आज बड़ी मुश्किल से टाइम निकाल कर आया हूँ, सो भी ससुरी मोटर बीच रास्ते में ही पंचर हो गई, वर्ना और जल्दी आ जाता।

महाराज दशरथ का अधजला सिगरेट प्रिन्स राम उठाकर पीने लगते हैं।

विश्वा०—(देखककर) वाह वा ! हिज रायल हायनेस प्रिन्स राम को भी सिगरेट पीने का शौक हो गया !

दशरथ०—उँ ! उँ ! (राम की ओर गुस्से से देखते हैं। राम सिगरेट फेंक देते हैं) बेवकूफ कहीं का। हजार बार कह दिया कि तू

अभी सिगरेट न पिया कर, कलेजे पर धुआँ बैठ जायगा, मगर मानता ही नहीं बेसहूर ! (राम का कान ऐंठते हैं—राम रोने लगते हैं) अब सिगरेट न पिया कर, भला !

राम० (रोते हुए) तब क्या पिया करें पिताजी ?

दशरथ०—पानी पीया कर !

विश्वा०—जाने दीजिये योर मैजेस्टी ! बच्चे हैं न ?..... हाँ तो, शायद आपको मालूम न होगा—मैंने इधर एक फिल्म कम्पनी खोली है। मनजीत फिल्म कम्पनी !

दशरथ०— वाह वा ! बुढ़ापे में यह शौक।

विश्वा०—फिल्म कम्पनी में बड़ा फायदा है—कम से कम भंग और पेड़े का खर्च तो निकल ही आता है—इस सुफेद बालों में लगाने के लिये खिजाब भी मिल ही जाता है।

दशरथ० (पुकारते हैं) सतुआ ! अरे सतुआ !

सतुआ० (आकर) हुकुम सरकार !

दशरथ०—देख तो, इस पाजी राम को भीतर ले जा। कम्बख्त ने जलता सिगरेट परदे के पास फेंक दिया। कीमती परदा जल गया। धत्त तेरे की !

सतुआ राम को लेकर जाता है। भरत आदि भी साथ जाते हैं।

विश्वा०—योर हाइनेस, मैं आपके पास एक बहुत जरूरी काम से आया हूँ। इस लड़ाई के जमाने में मेरे स्टूडिओ पर, ताड़का नामक राक्षसी ने अपने वायुयानों द्वारा आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया है। मारिच और सुबाहु नामक राक्षस इस आक्रमण में उसकी सहायता कर रहे हैं। पिछले दफे उनके हवाई जहाजों ने इतने हाइ एक्सप्लोसिब बाम्ब गिराये कि बाप रे बाप !

दशरथ०—जमाना बुरा आ गया है ऋषिराज ! देखिये न, अब तो सिगरेट मिलना भी मुश्किल हो गया है।

विश्वा०—मैंने सुना है कि प्रिन्स राम और लक्ष्मण ऐन्टी एयर

अफट गन्स चलाने में बहुत निपुण हैं। अगर आप उन्हें कुछ दिनों के लिये मुझे दे सकें, तो मैं अपने शत्रुओं पर विजय पा जाऊँ।

दशरथ०—ले जाइये। अगर आपको अपकार हो सके, यानी उपकार हो सके, तो आप ले जाइये। मगर जरा ख्याल रखियेगा। प्रिन्स राम को सुबह चाय पानी और अंडे का शोरवा मिलने में देर न हो।

विश्वा०—नहीं, नहीं—योर मैजेस्टी! आप निश्चिन्त रहें...

दशरथ०—(पुकारते हैं) सतुआ ओरे...

सतुआ०—आया सरकार! (आता है)

दशरथ०—देख! राम और लक्ष्मण को सफा कपड़े पहना कर ला।

(सतुआ जाकर राम और लक्ष्मण के कपड़े बदलवा कर लाता है।)

दशरथ०—देखो प्रिन्स राम और लक्ष्मण! तुम लोग आज राजर्षि विश्वामित्र के साथ जाओ मगर जरा भी शरारत न करना। (विश्वामित्र से) देखिये राजर्षि! यह राम सिगरेट न पा सके। नाक में दम कर दिया है इसने।

विश्वामित्र का राम और लक्ष्मण के साथ प्रस्थान।

दृश्य २

राजर्षि विश्वामित्र का मनजीत फिल्म स्टूडियो। विश्वामित्र घूम-घूमकर प्रिन्स राम और लक्ष्मण को स्टूडिओ का दिग्दर्शन करा रहे हैं।

विश्वा०—प्रिन्स राम! देखिये ये हैं हमारी कम्पनी की मशहूर एक्ट्रेस मिस शीला—चिटनिस—य' हैं मिस कान्ता आप्टे, य, हैं मिस विलोचना, य, हैं मिस अमोला, य, हैं श्रीमती सेविका रानी...और जरा इधर देखिये!...य'...य' हैं मिस्टर शिवपत्न पगनीस, य' हैं मिस्टर सोतीलाल, य' हैं मिस्टर छुहराव धोबी, य' हैं मिस्टर चन्द्र-सोहन और य' हैं मिस्टर घोड़ी, मिस्टर भिक्षुक और मिस्टर बाली—कामेडियन...देखा न! सिनेमा के सभी प्रमुख अभिनेता तथा अभिनेत्रियाँ हमारी कम्पनी में हैं, फिर भी सब शेष में कुछ सन्देह है।

राम०—जी नहीं ! (Care fulle are lessneso) ढंग से कन्धे हिलते हैं) एक सिगरेट न दीजियेगा—दे दीजिये न गुरु जी !

एकाएक वायुयानों की भयानक भनभनाहट सुनाई पड़ती है। विश्वामित्र गिरते-गिरते हैं।

राम०—क्या शत्रु के वायुवान आ पहुँचे ?

विश्वा०—(आँखों से टेलिस्कोप लगाकर आकाश की ओर देखते हुए) हाँ ताड़का की ही टोली है। मारीच और सुबाहु भी हैं। तुम लोग जल्द अपने ऐन्टीएयर क्रैफ्ट गन्स् को दुरुस्त करो। यही कार्य का समय है। वीरता में कलंक न लगाना।

राम और लक्ष्मण दौड़ते हुए बाहर जाते हैं। विश्वामित्र व्यग्रतापूर्वक टहलते हैं। स्टूडियो का सारा कार्य रुक जाता है। सभी के चेहरे पर भय छा जाता है। आसमान पर से बादल फटने-जैसी आवाज होती है। लगभग ५ मिनट तक वह आवाज जारी रहती है। १५ मिनट बाद राम और लक्ष्मण हँसते हुए आते हैं।

राम०—सब समाप्त हुआ गुरुजी ! शत्रुओं के वायुयान नष्ट हो गये। ताड़का और सुबाहु काल के ग्रास हुए, केवल मारीच भाग के जा सका। सो भी उसके वायुयान में आग लग गई है, अधिक दूर तक नहीं जा सकेगा।

विश्वा०—मैंने टेलिस्कोप से सब देखा है। शाबास ! तुम लोग बहुत वीर हो। (कुछ सोच कर) आज चलो मिथिला चलें वहाँ हिज मैजेस्टी महाराज जनक की सुपुत्री प्रिन्सेस सीता का स्वयम्वर होनेवाला है। बड़ा अच्छा समारोह होगा।

राम०—स्वयम्बर क्या गुरुजी।

विश्वा—कोर्टशिप से कुछ ही अन्तर होता है स्वयम्बर में। (पुकारते हैं) बेयरा ! (बेयरा आता है) देखो, मेरी कार ठीक कर दो। हम तीनों अभी मिथिला जायँगे। इसके पेश्तर तीन प्लेट चाय और आमलेट भेज दो, (बेयरा जाने लगता है) और सुन ! टेलीफोन से महाराज जनक को खबर कर दो कि मुझे रिसीव करने के लिये तैयार रहें।

(बेयरा जाता है)

दृश्य ३

मिथिला पैलेस के अतिथि-गृह में राजर्षि विश्वामित्र, प्रिन्स राम तथा लक्ष्मण रेडियो के पास बैठे हुए गाना सुन रहे हैं।

विश्वामित्र०—(रेडियो का स्विच बन्द कर) प्रिन्स राम ! मेरी पूजा का टाइम हो गया। देखो तो घड़ी में ग्यारह बज रहे हैं। जाओ, वाटिका से कुछ पुष्प लाओ। प्रिन्स लक्ष्मण ! तुम भी चले जाओ।

दृश्य परिवर्तन

उद्यान ! प्रिन्सेस सीता अपनी सहेलियों के साथ उद्यान में घूम रही हैं।

सीता०—आओ, इसी फुहारे के पास बैठें—जरी मेरा शृंगारदान तो देना (एक सखी शृंगारदार देती है। सीता उसमें से पाउडर केस निकाल कर मुँह पर पफ फेरती हैं, लिपस्टिक निकाल कर होंठ लाल करती हैं, क्यूटेयस निकाल कर नाखूनों पर लगाती हैं, तत्पश्चात् जाकेट की जेब से इत्रदार रुमाल निकाल कर सखी की ओर बढ़ाती हैं) सखी ! जरी इस हैण्डकरचीफ से मेरा सैण्डिल पोंछ दो (सखी पोछने लगती है) देखो, देखो !—अरी अम्मा ! इतनी जोर से रगड़ दिया कि मेरा दुखने लगा।

एक सखी०—(सीता से) ओ री सखी ! ओ जो विश्वामित्र के साथ काले गोरे दो नवजवान आये हैं न ?—बड़े सुन्दर हैं सखी ! अभी मैंने देखा है। व' उधर की बगिया में पुष्प चयन कर रहे हैं—चलो न ! तुम्हें दिखा दूँ—

सीता०—चलो।

सब चलती हैं। कुछ दूर आकर रुक जाती हैं। राम और लक्ष्मण एक गुलाब के पेड़ से फूल तोड़ते रहते हैं, एकाएक इधर भी नजर पड़ जाती है। सीता शर्मा कर पैलेस में चली जाती हैं।

राम०—कौन थी यह लक्ष्मण ?

लक्ष्मण०—प्रिन्सेस सीता थीं भैया !

राम०—(कलेजे पर हाथ रख कर) ले गई लक्ष्मण ! वह ले गई—

लक्ष्मण०—(घबड़ा कर) क्या ले गई भैया !

राम०—दिल, पगले ! और क्या ले जायगी।

लक्ष्मण०—यह ठीक नहीं है भैया ! स्वयम्बर की शर्त बड़ी टेढ़ी है ! सुनते हैं कि शिवजी का एक बड़ा सा धनुहा है, उसे जो कोई तोड़ देगा, वही...

राम०—हाय हाय, लक्ष्मण ! हाय हाय !

लक्ष्मण०—धैर्य धरो भाई ! आशा छोड़ दो। प्रिन्सेस सीता बड़ी बलवान हैं। मिथिला जिम्नाष्टिक हाउस आफ फिमेल्स, ये बहुत दिनों तक कसरत कर चुकी हैं। तभी तो खेल ही खेल में उन्होंने वह धनुहा उठा लिया था।

राम०—(खुशी से काँपते हुए)—उठा लिया था ? उठा लिया था लक्ष्मण ?

लक्ष्मण—हाँ भाई हाँ ! चलिये चला जाय देर हो गई।

राम०—(चलते हुए)—हाँ यह तो कहो—कल गुरुजी के सेफ से जो तुमने एक डिब्बा चुराया था, वह कहाँ है ?

लक्ष्मण०—अरे ! वह तो क्रुश्चेन साल्ट का डब्बा था भाई ! गुरु जी पेट साफ करने के लिये उसे हमेशा रखते हैं।

दृश्य ४

धनुष यज्ञ का पंडाल खचाखच भरा है। राजे, महाराजे, देवता, राक्षस, सभी यथा योग्य आसनों पर विराजमान हैं। राक्षस राजा रावण बड़े ताव से मूँछों पर टेव देता हुआ अपने चुरुट का कश खींच कर उसका धुआँ उस परदे की ओर फेंक रहा है, जिसकी ओट में जयमाल लिये प्रिन्सेस सीता उपस्थित है। एक ओर राजर्षि विश्वामित्र के साथ प्रिन्स राम और लक्ष्मण भी बैठे हैं। बीच में वह बड़ा-सा धनुहा रखा

है। जगह ब जगह बिजली के पंखे अपनी पूरी रफ्तार में चल रहे हैं। महाराज जनक चुपचाप आसन पर बैठे हैं।

जनक—(उठकर) आगत सज्जनों!...आई मीन...आप लोगों को बहुत कष्ट हुआ होगा यहाँ पधारने में, क्योंकि आज कल मिथिला में रेल का प्रबन्ध जरा भी सन्तोषजनक नहीं है, फिर भी...अच्छा तो अब काम शुरू हो जाना चाहिये। (बैठ जाते हैं)

एक राजा उठता है और धनुष को उठाने का प्रयत्न करता है, दूसरा उठता है, फिर तीसरा, चौथा, पाँचवाँ मगर धनुष नहीं उठता।

रावण—(उठता हुआ) हटो हटो! (अपना चुरुट फेंक देता है) जरा मुझे भी अजमाने दो (रावण भी धनुष उठाने में असमर्थ हो जाता है। एक राजा उस पर ठठा कर हँस पड़ता है। रावण बिगड़ उठता है) यह क्या? खबरदार अब जो खी खी खी करेगा। बिना मारे छोड़ूँगा नहीं—कहे देता हूँ बस।

राजा०—आप धनुष...

रावण०—धनुष फनुष गया भाड़ में—मुझसे दिल्लगी करना अच्छा नहीं (बैठ जाता है। फिर अपना चुरुट पीने लगता है। बारी-बारी से सभी राजा उठते हैं और हार कर बैठ जाते हैं।)

जनक०—(उठ कर)—अफसोस! आज सारी दुनियाँ में कोई गामा ही न रहा? हाय हाय! यदि यह जानता, तो कभी ऐसा प्रण ना करता। जाइये, जाइये! अपने-अपने घर जाकर कसरतें कीजिये शर्म...

लक्ष्मण—(तैश से खड़े होकर) हिज मैजेस्टी महाराज जनक ने जैसी अनुचित बात कही है, वह असह्य है। अब भी इस सभा में हिज रायल हायनेस प्रिन्स राम आफ कौशलपुर विराजमान हैं। यह उनका अपमान है।

कुछ राजा गण०—(खड़े होकर) अपमान है, तो जरा कुछ कर दिखावें।

विश्वा०—(राम से धीमे शब्दों में) उठो प्रिन्स! यही समय है।

राम०—(धीरे से) पिताजी का डर है, नहीं तो मैं यह धनुहा फनुहा क्षण भर में तोड़ देता गुरुजी !

विश्वा०—तुम उठो—तुम्हारे पिता पर हमारा जिम्मा।

प्रिन्स राम उठते हैं और धनुष के पास आकर उसे उठा लेते हैं। उठाते ही धनुष खट्ट से टूट जाता है। सब चीत्कार कर उठते हैं। प्रिन्सेज सीता मोतियों का नेकलेस राम की गर्दन में डाल देती हैं ?

जनक०— (हर्ष से) गुड लक प्रिन्स राम ! गुड लक !

बाहर बहुत शोर-गुल सुनाई पड़ता है। दूसरे ही क्षण उस पंडाल में क्रोधित परशुराम प्रवेश करते हैं। कन्धे पर रूस का बना हुआ फरसा, हाथ में एक फैन्सी छड़ी, पैर में बाटा शूर है। पैर पटकते हुए आकर वे सभा में खड़े हो जाते हैं। एक चुटकी सुँघनी निकाल कर सूँघते हैं।

परशु०—(गरज कर) हैं ! यहाँ आज इतनी भीड़ क्यों है ? क्या बात है ?...(और गरज कर) क्या बात है जनक ! यह क्या माजरा है ?...और यह धनुष कैसे टूटा। बोल जनक ! कुलांगार !

जनक०—(काँपते हुए) गुरुदेव ! गुरु...

परशु०—चुप !...बता कहाँ है वह चाण्डाल नास्तिक, जिसने धनुष तोड़ा—बोल !... !...

सबकी अक्की-बक्की भूल जाती है। सभा के हर एक राजा बारी-बारी से उठकर परशुराम के चरणों पर सर रख कर अपना और अपने बाप का नाम बताते हैं ? परशुराम क्रोधित स्वर में आशीर्वाद देते हैं। अन्त में लक्ष्मण उठते हैं। वे दूर ही से प्रणाम कर लौटने लगते हैं।

परशुराम०—(चिल्लाकर) हे छोकरे ! इधर आ ! इस पैर पर सर पटक—नहीं अभी गर्दन तोड़ दूँगा।

लक्ष्मण०—(हँसकर) ऐ वाह ! मेरा सर भी कोई कद्दू है क्या जो तुम्हारे पैरों पर पटक दूँ। यहाँ कोई कुम्हड़े की बतिया नहीं है, जो इस बनर-घुड़की से मुरझा जाय।

परशु०—(क्रोध से) मना कर दो। मना कर दो विश्वामित्र ! इस

छोकरे को मना कर दो। यह जानता नहीं कि मैं कौन हूँ। मैं हूँ रूस निवासी परशुराम !...साढ़े इक्कीस बार मैंने इस पृथ्वी पर से क्षत्रियों का नाश किया है...मेरा...मेरा यह फरसा एक सौ नवासी आदमियों का खून पी चुका है—हूँ !...(परशुराम अपना फरसा भर्र-भर्र हवा में चारों ओर घुमाते हैं। अगल-बगल के लोग डर कर दूर हट जाते हैं। जनक इशारे से विश्वामित्र को अपने पास बुलाते हैं)

जनक०—(धीरे से) कुछ दे दिला कर मामला शान्त कीजिये राजर्षि ! नहीं तो यह बड़ा झमेला मचायेगा।

विश्वा०—योर मैजेस्टी ! यह बड़ा भारी लफंगा है। खुद अपने माँ-बाप का खून कर चुका है। इतना खूँखार है यह, कि जब मैं इसे देखता हूँ तो पेट दर्द करने लगता है, मीठा-मीठा बुखार हो आता है।

जनक०—(हाथ जोड़ कर) जिस तरह हो सके, इसे निपटाइये यद्यपि मेरी आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं है, फिर भी मैं अपना रेडियो सेट बेंच कर कुछ रुपयों का इन्तजाम कर लूँगा।

विश्वा०—अच्छा देखता हूँ (परशुराम के पास आते हैं) शान्त हूजिये मान्यवार !

परशुराम०—(बिगड़ कर) खाक शान्त होऊँ...य' तो कहिये कि मैं अपने हवाई जहाज पर से इधर से जा रहा था, वर्ना पता ही न चलता कि कब धनुष टूटा—थू !......अगर कहीं इस वक्त वह धनुष तोड़क मुझे मिल जाय, तो खून, तबाही, आफत मचा दूँ। उसकी बोटी बोटी उड़ा दूँ।

विश्वा०—जिसने धनुष तोड़ा है, वह ऐसा-वैसा मुहीं है मान्यवार ! वह भी बड़ा बहादुर है !

परशु०—(उछल कर) धत्त तेरे बहादुर की दुम में। बताओ कहाँ कम्बख्त !

विश्वा०—शान्त मान्यवर ! शान्त !

विश्वामित्र खिसक कर परशुराम के पास हो जाते हैं और उनके

कान में देर तक फुसफुसाते रहते हैं, तत्पश्चात् उठकर महाराज जनक के पास जाते हैं।

विश्वा०—(जनक से) बड़ी मुश्किल से ऊँचा-नीचा समझा कर राजी कर लिया है योर मैजेस्टी !

जनक०—कितना माँगता है ?

विश्वा०—उफ ! पहले पहल तो उसने इतना माँगा कि मैं गिरते-गिरते बचा।

जनक०—कितना ?

विश्वा०—बहुत ज्यादा !

जनक०—आखिर....

विश्वा०—दस हजार !

जनक०—(काँप कर) जो मेरे बाप !

विश्वा०—बहुत कहने-सुनने पर सवा नौ हजार पर राजी हुआ है। इतना देना ही पड़ेगा, वर्ना सब गुड़ गोबर हो जायगा।

जनक०—(उदास चेहरे से) अच्छा, किसी तरह इन्तजाम करूँगा ।

विश्वा०—और उसके हवाई जहाज के ड्राइवर के लिए एक डायमण्ड रिस्टवाच—

जनक०—(बिगड़ कर) उसके ड्राइवर की ऐसी तैसी ! वह कम्बख्त कौन होता है।

विश्वा०—शान्त योर मैजेस्टी ! अपना भला-बुरा सोच लें।

विश्वामित्र अपने आसन पर आ पर आ बैठते हैं। महाराज जनक एक गठरी लाकर परशुराम के हाथों पर रख देते हैं। परशुराम हँसते हुए चले जाते हैं।

विश्वा०—बड़े-बड़े घूसखोर हैं दुनियाँ में। (जनक से) योर मैजेस्टी ! प्रिन्स राम के मैरिज का शुभ समाचार कौशल नरेश के पास अपने दूत द्वारा अति शीघ्र भेजिये।

जनक०—बहुत अच्छा :

दृश्य ५

हिज हाइनेस महाराज दशरथ के दरबार में सभासद्गण बेशकीमती सूट पहने हुए बैठे हैं। महाराज दशरथ के प्राइवेट सिक्रेटरी मिस्टर सुमंत एक मोटी सी फाइल मेज पर खोल कर रखे हैं। महाराज दशरथ अपनी पारकर फाउन्टेनपेन से आवश्यक कागजातों पर दस्तखत बना रहे हैं और बायें हाथ की उँगलियों में दबे हुआ पासिंग शो सिगरेट का एक कश भी कभी-कभी खींच लेते हैं।

दशरथ०—(दस्तखत कर चुकने पर फाउन्टेन पेन कोट की ऊपरी जेब में खोंसते हुए) मिस्टर सुमन्त !...ऐं बाह ! जरी सभासद गण को भी एक एक सिगरेट पिलाइये। न हो तो 'गिनीगोल्ड' ही सही।

सुमन्त०—आल राइट योर मैजेस्टी !

'सभासदों को एक-एक गिनीगोल्ड सिगरेट दिया जाता है।'

दशरथ०—(अपना सिगरेट पीते हुए) यह पासिंग शो भी करीब करीब वैसा ही है, जैसा कि गिनीगोल्ड; फर्क सिर्फ यही है कि यह 'कार्कटिप्ड है...क्या बताऊँ ! आगे के दो दाँत टूट जाने के कारण लार से सिगरेट का कागज भींग जाता है, इसीलिये मैं मजबूरन 'कार्कटिप्ड' सिगरेट पीता हूँ—नहीं तो भला 'गिनी गोल्ड का कोई मुकाबला है ? (मिस्टर सुमन्त को तेजी के साथ सिगरेट पीते देख कर) मिस्टर सुमन्त ! एक एक कश...

सुमन्त०—बेग योर मैजेस्टीज पार्डन !

दशरथ०—भई, एक-एक कश, न कि घसा-घस्स।

द्वारपाल आता है।

दशरथ०—(द्वारपाल से) क्या है सतुआ !

सतुआ०—महाराज जनक का राजदूत आया है।

दशरथ०—आया है, तो कह दो चला जाय, अभी, इसी वक्त !

सतुआ जाने लगता है

सुमन्त०—ठहरो ! (दशरथ से) योर मैजेस्टी ! कम से कम यह तो पूछ लिया जाय कि वह किस काम से आया है ?

दशरथ०—अच्छा पूछ ही लो भाई !

सतुआ जाता है। जनक का दूत आता है और (अँग्रेजी ढंग से सैल्यूट करता है।

दशरथ०—सलाम ! सलाम !...क्या है ? वह तुम्हारे हाथ में क्या है !

दूत०—यह हिज हाइनेस का पत्र है योर मैजेस्टी ! (पत्र दशरथ की ओर बढ़ाता है।

दशरथ०—सिक्रेटरी ! यह खत पढ़ो।

सुमन्त०—(खत लेकर जोर-जोर से पढ़ता है) शिरी सर्व गुण सम्पन्न कौशलाधिश हिज...मैजेस्टी महाराज श्री (रुक कर) इकाई दहाई सैकड़ा हजार दस हजार...अरे बाप रे।

दशरथ०(घबड़ा कर) क्यों क्या हुआ ?

सुमन्त०—(पढ़ता जाता है) हिज मैजेस्टी महाराज श्री १००००० श्री राम दशरथ के चरण कमलों पर सेवक जनक का एक सौ साढ़े आठ प्रणाम्।

दशरथ०—यह सेवक जनक कौन है जी ?

सुमन्त०—योर मैजेस्टी ! यह हिज हाइनेस महाराज जनक का नाम है।—(फिर पढ़ता है) आज कल हिजरायल हायनेस प्रिन्स राम यहाँ विराज रहे हैं, हिज होलीनेस राजर्षि विश्वामित्र तथा प्रिन्स लक्ष्मण भी साथ में। प्रिन्स राम का बिवाह मेरी सुपुत्री प्रिन्सेज सीता से आगामी मिती.....को होना निश्चित् हुआ है।

दशरथ०—(हड़बड़ा कर उठते हुए) अरे अरे सुनो ! सर्कार !

सुमन्त—(पढ़ता ही जाता है) आप कृपया उचित समय पर बारात के साथ आने का कष्ट...

दशरथ—(क्रोध से) कहता हूँ रुको रुको ! (सुमन्त रुक जाता है) सत्यानाश हो गया सिक्रेटरी ! यह पाजी राम मिथिला में जाकर कोर्ट-

शिप कर रहा है—उल्लू कहीं का। सिक्रेटरी ! यह विवाह नहीं होगा, नहीं होगा, नहीं होगा...(अन्दर से आवाज आती है—' होगा, होगा जरूर होगा'—(दशरथ क्रोधित होते हैं) यह कौन पाजी अन्दर से बोल रहा है। घसीट लाओ बाहर।

सुमन्त अन्दर जाता है। आधी मिनट में वापस आता है।

सुमन्त०—योर मैजेस्टी ! व' रेड़ियो बोल रहा है। अन्दर हर मैजेस्टी बैठी हुई लखनऊ स्टेशन का कोई ड्रामा सुन रही हैं।

दशरथ०—सतुआ को बुलाओ—जल्द ! अभी !

सतुआ काँपता हुआ आता है।

दशरथ०—क्यों बे बदबख्त कम्बख्त ! ऐसे मनहूस दूत को तूँ क्यों ले आया यहाँ ? सूअर ! कमीना ! पाजी ! (सतुआ का कान पकड़ कर हिलाते हैं)।

सतुआ०—अरे यह क्या हजूर ! सरकार ! यह आपको हो क्या गया ? अभी तो आप बिल्कुल अच्छे थे...।

दशरथ०—(ताने से) और अब पागल हो गया हूँ—क्यों ?...तेरी ऐसी की तैसी ! बेइमान, यह बदमाशी ! मारे जूतों के...मारे जूतों के...(पैर से बूट निकालने लगते हैं)।

सतुआ०—(धीरे से) अरे यहाँ नहीं, यहाँ नहीं हजूर ! अन्दर चलके मारिये नहीं तो लोग—सोचेंगे आज आप नशे में हैं।

दशरथ०—चल ! चल ! भीतर ही चल ! आज तेरा कचूमड़ निकाल लूँगा—(मारते हुए जाते हैं)।

दृश्य ६

गुरु वशिष्ठ का घर। गुरु वशिष्ठ बैठे हुए चन्द्रकान्ता सन्तति पढ़ रहे हैं। महाराज दशरथ घबड़ानी सूरत लिये हुए दौड़ते हुए जाते हैं।

दशरथ०—(वशिष्ठ को बिना देखे हुए) गुरुदेव ! गुरुदेव !... हाय ! हाय ! आप कहाँ चले गये...?

वशिष्ठ०—(बैठे हुए) क्या हुआ ? क्या हुआ योर मैजेस्टी ?

दशरथ०—(बदहवासी में इधर-उधर दौड़ते हैं। वशिष्ठ को नहीं देख पाते) हाय गुरुदेव ! मुझ पर ऐसी मुसीबत और आप न जाने कहाँ चले गये—क्या करूँ ? (रोनी आवाज में) क्या करूँ गुरुदेव ?

वशिष्ठ०—योर मैजेस्टी बताइये ! मैं यह हूँ। (उठ कर खड़े हो जाते हैं। महाराज दशरथ दूसरी ओर दौड़ते हैं)।

दशरथ०—हाय इस बुढ़ापे में यह मुसीबत...और गुरुदेव लापता ! कहाँ ढूढ़ने जाऊँ ?

वशिष्ठ—(दशरथ का हाथ पकड़ कर) मैं यह हूँ योर मैजेस्टी !

दशरथ०—(चौंक कर) आप हैं ? मिल गये ?...आइये, बैठिये, जरा गौर से मेरी बातें सुनिये। (दोनों आदमी एक ही सोफे पर बैठ जाते हैं)।

वशिष्ठ०—कहिये योर मैजेस्टरी ! सब खैरियत तो है ?

दशरथ—यही तो नहीं है गुरुदेव ! बाकी सब कुछ है।

वशिष्ठ०—आखिर कुछ कहिये तो—एकाध सिगरेट मगाऊँ ?

दशरथ—नहीं, रहने दीजिये। इस वक्त कुछ नहीं सुहाता।... क्या बताऊँ गुरुदेव ! मेरी नाक कट गई।

वशिष्ठ०—(चौंक कर) अरे ! नाक कट गई ? देखूँ तो ! (अपना टूटा चश्मा ठीक करके दशरथ की नाक टटोलते हैं)।

दशरथ०—यह नहीं गुरुदेव ! यह नहीं...

वशिष्ठ—तब कौनसी योर मैजेस्टी ?

दशरथ०— अरे गुरुदेव ! मेरी इज्जत बिगड़ रही है...।

वशिष्ठ—अच्छा रहने दीजिये—जब इज्जत का मामला है तो रहने दीजिये।

दशरथ०—आप समझ नहीं रहे हैं। आज कल राम हिटलर हो गया है हिटलर !...

वशिष्ठ०—(ताज्जुब से) अच्छा !

दशरथ०—हाँ गुरुदेव, हाँ ? उसने महाराज जनक की पुत्री से अपनी शादी ठीक कर ली है। उस बेहया बेशर्म को अपनी इज्जत का...।

वशिष्ठ०—(अफसोस के साथ) आज कल का जमाना ही ऐसा है योर मैजेस्टी ! आज कल के लड़के बाप के भी बाप बन बैठते हैं।

दशरथ०—तो अब क्या किया जाय गुरुदेव ?

वशिष्ठ०—क्या कीजियेगा। ले चलिये बारात ! जमाने का रुख देख कर चलिये—और कोई उपाय नहीं है ?

दशरथ०—अच्छा तो मैं चलता हूँ। अफसोस !

(चले जाते हैं)

—: ० :—

दृश्य ७

महाराज जनक का अतिथि-गृह। विश्वामित्र आराम कुर्सी पर बैठे हैं। प्रिन्स राम घबड़ाये हुए इधर से उधर टहल रहे हैं। प्रिन्स लक्ष्मण शीशे में अपनी सूरत देखते हुए चेहरे पर स्नो मल रहे हैं।

राम०—अब क्या होगा गुरुजी ? अवधपुर से जो दूत लौट कर आया है, वह कहता है कि पिता जी बहुत बिगड़े हैं। अब तो मेरी खैरियत नहीं दीखती। न जाने किस कुसायत में धनुहा तोड़ा।

विश्वा—धैर्य धरो प्रिन्स ! कोई सूरत निकल आयेगी।

राम०—अब क्या खाक निकलेगी। अब तो मेरी हड्डी पसली चूर होती नजर आ रही है।

विश्वा०—यह शादी तो होगी ही—रुक तो सकती नहीं। निश्चित तिथि पर महाराज दशरथ आयेंगे। उन्हें आने दीजिये, तब कोई तरकीब सोचेंगे :

राम०— हाय हाय ! उनके आने पर आप क्या करेंगे ? यहाँ तो सिर्फ उनसे मिलने के ख्याल से ही बुखार आ रहा है।

विश्वा०—अरे भाई ! जरा पहली दफा उनसे तन कर मिलिये—नहीं तो सब हवा हो जायगा। अब जरा ऐंठ कर खड़ा होने की आदत डालिये और जब वह कुछ डाँट डपट करें, तो आप भी बेधड़क जवाब दें···हाँ तो जरा तनके खड़े हो जाइये।

राम०—(बहुत ज्यादा तन कर) यह लीजिये।

विश्वा—वाह ! आप तो एकदम ऊँट की गरदन हो गये। जरा इतना न ऐंठ जाइये...हाँ, ठीक है...अच्छा, अब मान लीजिये कि मैं आपका बाप हूँ। मैं आप पर बिगडता हूँ। आप मेरी बात का जवाब दीजिये—(जोर से) क्यों बे नालायक बेशर्म कहीं का। यह क्या किया तूने ! दूर हो यहाँ से—भाग जा—जाकर पोखरे के पानी में डूब मर। यहाँ आकर यह बद-तमीजी कर डाली तूने ! बी० ए० पास कर तूने यही सलीका सीखा !...(धीरे से) उँह उँह। अरे बोलिये प्रिन्स कुछ... (जोर से) तुझे इतनी हिम्मत हो गई कि बिना मुझसे पूछे अपनी शादी पक्की कर ली ! बदमाश ! आवारा ! (धीरे से) प्रिन्स राम ! बोलिये कुछ...।

राम०—मेरी समझ में अभी तक यही नहीं आया कि यह मेरे पिताजी बिगड़ रहे हैं या आप ?

(महाराज जनक आते हैं)

विश्वा०—(जनक से) पधारिये योर मैजेस्टी !

जनक०—मैंने सुना कि हिज मैजेस्टी महाराज दशरथ बारात के साथ नगर के समीप आ पहुँचे हैं...।

राम०—(डरते हुए) अरे बाप रे !

जनक०—क्या हुआ ! क्या हुआ प्रिन्स ?

राम०—कुछ नहीं—कुछ नहीं !

जनक०—मैंने उनकी अगवानी के लिये १०८ तोपों की सलामी की आज्ञा दे दी।

दृश्य ८

मिथिला नगर में बारात आ रही है। महाराज दशरथ खूब ठाट-बाट से एक चमचमाती हुई मोटर पर बैठे हैं। एकाएक तोपों की गड़-गड़ाहट सुनाई पड़ती है !

दशरथ०—(चौंक कर) हैं ! यहाँ तो तोपें दग रही हैं। लड़ाई का पूरा सामान नजर आता है। कहता था कि यह सब धोका है, हमें यहाँ बुला कर मार डालने की तदबीरें हैं···।

सुमन्त०—नहीं योर मैजेस्टी ! यह आप की सलामी उतारी जा रही है···

दशरथ०—(ताज्जुब से) सलामी ?···ओह ! जनक भी कैसे पुराने ख्याल के आदमी हैं। ऐसे मौके पर बैण्ड बजाना चाहिए था। इस राम ने न जाने किस सनातन धर्मी के यहाँ अपनी ससुराल चुनीं।

(राजर्षि विश्वामित्र के साथ प्रिन्स राम और लक्ष्मण आते हैं। दशरथ मोटर पर से उतरते हैं।)

राम०—आबाज अर्ज पिता जी ! आबाज अर्ज। आपको देखकर मुझे बहुत खुशी हुई (दशरथ से गले मिलने के लिए हाथ फैलाकर आगे बढ़ते हैं)

दशरथ०—(दूर हट कर) ठहरो ! मैं तुमसे दो-एक बातें पूछना चाहता हूँ ?

राम०—मुझे गले मिलने दीजिये पिता जी !

दशरथ०—ठहरो मैं कहता हूँ, ठहरो (और आगे दूर हट जाते हैं) यह क्या ? कान पर यह अधजली सिगरेट खोंस रखा है। यहाँ भी तू सिगरेट न छोड़ सका ? (राम कान पर की सिगरेट फेंक देते हैं) कहिये मेरे लायक बेटे साहब !···सूअर ! कमबख्त !...

विश्वा०—(आगे बढ़ कर) योर मैजेस्टी, आबाद अर्ज !

दशरथ०—बंदगी अर्ज (राम से) तुमने मेरा नाम खूब चमकाया। बड़ा ही अच्छा काम किया तुमने !

विश्वा०—योर मैजेस्टी ! रास्ते में तो किसी किस्म की तकलीफ नहीं हुई !

दशरथ०—नहीं ! आप की कृपा है। (राम से) अबे बोलता क्यों नहीं सूअर के बच्चे, उल्लू के पट्ठे ! बोल बोल ! (राम का कान पकड़ लेते हैं)

विश्वा०—योर मैजेस्टी! रहे तो आप मजे में न?

दशरथ०—हाँ, बहुत अच्छी तरह...मगर जरा ठहरिये। मुझे इस सूअर को इतमीनान से डाँट लेने दीजिये (राम का कान जोर से उमेठते हैं) तूने इतना भारी बेहयाई का काम किया? तू हमेशा इसी तरह काम करता है—आज ही तो पकड़ पाया है तुझे—बोल, आज तक तूने कौन-कौन सी शरारत की है?

राम०—बस यही गलती की है पिताजी! और कुछ नहीं।

दशरथ०—(और जोर से कान उमेठते हुए) धत्तेरे की। ठीक ठीक बता नहीं तो मारे जूतों के—(एक हाथ से जूता उतारने लगते हैं)

राम०—बताता हूँ पिताजी! आज से एक महीना पहले रात में जब कि आप पलँग पर सो रहे थे, तो एक सिगरेट चुराने की गरज से मैंने आपकी शेरवानी के जेब से आपका सिगरेट केश निकाला था। उसी वक्त आप जाग पड़े थे और अँधेरे में मुझे देखकर चोर समझ लिया था। मैंने सोचा अगर आप चिल्लायेंगे तो नौकरों के आने पर मेरी चोरी पकड़ ली जायगी। यही सोच कर आपके चिल्लाने के पहले ही मैंने आपका गला धर दबाया था और आप मुझे भूत समझकर बेहोश हो गये थे।

दशरथ०—वह तू ही था—तू ही।

महाराज जनकजी आते हैं। महाराज दशरथ राम का कान जोड़ देते हैं।

* समाप्त *